भारत में नारी-मुक्ति का प्रश्न

" जो प्रमेय हम प्रस्तुत करें उनमें यह बात पुरजोर तरीके से आनी चाहिए कि साम्यवाद के बिना महिलाओं की वास्तविक मुक्ति सम्भव नहीं है। तुम्हें महिलाओं की मानवीय व सामाजिक स्थिति और उत्पादन साधनों पर निजी मालिकाने के अविभाज्य अन्तरसम्बन्ध पर जोर देना होगा। ऐसा करने से महिलाओं की मुक्ति के लिए चलाये जा रहे बुर्जुआ आंदोलन और हमारे बीच एक सुस्पष्ट व अमिट रेखा खिंच जायेगी। ऐसा करने से हमें महिला प्रश्न को सामाजिक प्रश्न (मजदूर वर्ग के प्रश्न) के हिस्से के बतौर परखने के लिए आधार मिलेगा और हम इसे सर्वहारा के वर्ग संघर्ष एवं क्रांति के साथ मजबूती से बांध पायेंगे। कम्युनिस्टों का महिला आंदोलन स्वयं एक जनआंदोलन होना चाहिए, बल्कि सार्विक जनआंदोलन का एक हिस्सा होना चाहिए; न केवल सर्वहाराओं के आंदोलन का हिस्सा बल्कि पूंजीवाद या प्रभुत्वकारी वर्ग से उत्पीड़ित व शोषित सभी लोगों के आंदोलन का हिस्सा। सर्वहारा के वर्ग संघर्ष एवं उसके ऐतिहासिक मिशन, साम्यवादी समाज के सृजन के लिए महिला आंदोलन का महत्व यहां से समझा जा सकता है। हमें इस बात पर गर्व करने का पूरा अधिकार है कि हमारी पार्टी और कौमिंटर्न में, क्रांतिकारी नारीत्व के फूल खिले हुए हैं। मगर यह निर्णायक नहीं है। अभी हमें शहर व देहात की करोड़ों मेहनतकश महिलाओं को अपने संघर्ष, विशेषकर समाज के साम्यवादी पुनर्निर्माण के लिए अपने साथ खड़ा करना है। महिलाओं के बिना कोई वास्तविक जनआंदोलन नहीं हो सकता है।'' (कौमिंटर्न की तीसरी कांग्रेस की तैयारियों के दौरान क्लारा जेटकिन को दी गयी लेनिन की सलाह; Lenin,`On Emancipation of Women`; Progress Pub., Ed.-1977; pp: 109 - 110, अनुवाद हमारा)

सत्य अमूर्त नहीं होता, सत्य हमेशा ठोस होता है। आज 21वीं सदी की शुरूआत में भारत में नारी-प्रश्न जिस रूप में प्रस्तुत है, जैसा वह न तो ब्रिटिशकालीन भारत में प्रस्तुत था और न ही नेहरू के जमाने के भारत में। अतः उसके समाधान की सही कार्यनीति भारत एवं विश्व की वर्तमान परिस्थितियों के ठोस विश्लेषण की मांग करती है। इस पत्रिका (लाल सलाम) के अंक 5 में प्रकाशित सम्मेलन के दस्तावेज में हमने यह विश्लेषण प्रस्तुत किया है। यहां हम उसे दोहरायेंगे नहीं। यहां हम उस चौखटे के भीतर, नारी-प्रश्न को अवस्थित करेंगे और उन महत्वपूर्ण बातों को प्रतिपादित करेंगे जो कि इसके वास्तविक समाधान के लिए जरूरी हैं। नारी-प्रश्न की अर्मूत प्रस्तुति एवं इसके समाधान की किसी अमूर्त कार्यनीति से परहेज करने का यह मतलब कतई नहीं हो सकता कि इस प्रश्न की प्रकृति से सम्बन्धित जो आम बातें हैं, जो कि देश-काल सापेक्ष नहीं हैं बल्कि सभी वर्ग समाजों में पायी जाती हैं, का उल्लेख न किया जाय या उन्हें दोहराया न जाय। उल्टे

आज के विशिष्ट दौर में जब बुर्जआ विचारधारा का वर्चस्व लगभग मुकम्मिल है, तब इस प्रश्न की प्रकृति से जुड़ी बुनियादी महत्व की बातों को दोहराना और भी जरूरी हो जाता है क्योंकि उन्हें अनदेखा करके इस प्रश्न का कोई अपूर्ण समाधान भी नहीं हो सकता है। अतः हम नारी-प्रश्न की प्रकृति से जुड़ी बुनियादी महत्व की बातों से किनाराकशी नहीं करेंगे, बल्कि इनके आधार पर ही हम 21 वीं सदी के भारत में नारी-प्रश्न को उसकी समकालीनता में, उसकी विशिष्टता में, उसकी मूर्तता में समझेंगे।

समकालीन दुनिया की सबसे बड़ी विशिष्टता साम्राज्यवाद की मौजूदगी और उसकी हमलावर स्थिति है। समकालीन भारत की सबसे महत्वपूर्ण विशिष्टता यह है कि यह मूलतः एक पूंजीवादी समाज बन चुका है। साम्राज्यवाद की मौजूदगी के बावजूद भारत का पूंजीवादीकरण हुआ है और यह प्रक्रिया अब भी जारी है। बुनियादी महत्व के इस सत्य को अस्वीकार करने वाले कुछ मित्र हम पर मौखिक कटाक्ष करते हैं कि 'तब तो आप की नजर में नारी-प्रश्न भी काफी हद तक हल हो गया होगा?'। इन नेकनीयत मित्रों को हमारा जवाब है- जी नहीं! नारी-प्रश्न अभी भारतीय इतिहास की कार्यसूची पर चढ़ रहा है, और भारत के पूंजीवादी विकास ने ही वे स्थितियां तैयार की हैं कि ऐसा हो सके। इसका समाधान अभी होना है। भारतीय पूंजीवाद के दायरे में इसका कोई वास्तविक समाधान सम्भव नहीं है, बल्कि भारत में पूंजीवाद के उत्तरोत्तर विकास के साथ यह प्रश्न अपने पूरे आवेग के साथ प्रस्तुत होगा। भारत की भावी समाजवादी क्रांति के जरिये ही इसके समाधान की ओर बढ़ा जा सकेगा बल्कि इस प्रश्न के समाधान की वास्तविक शुरूआत भारत की समाजवादी क्रांति का एक अहम कार्यभार है।

अपने इन नेकनीयत मित्रों से हमारा कहना है कि हम उनकी इस बात से सहमत हैं कि नारी-प्रश्न एक जनवादी प्रश्न है और सिद्धान्ततः यह पूंजीवाद में हल हो सकता है। मगर यह जरूरी नहीं कि हर जनवादी-प्रश्न पूंजीवाद में व्यवहारतः हल हो ही जाय।

> "...पूंजीवाद के अंतर्गत निरपवाद रूप से **सभी** जनवादी अधिकारों की तरह तलाक का अधिकार भी सशर्त, सीमित, संकुचित और औपचारिक है और उसे अमली जामा पहनाना अत्यंत ही कठिन है। .... **समस्त** "जनवाद" उन "अधिकारों" की घोषणा और पूर्ति में निहित है, जिनकी पूंजीवाद के **अन्तर्गत** पूर्ति न्यून मात्रा में तथा सशर्त ही सम्भव है।"(लेनिन,मार्क्सवाद का विकृत रूप और "साम्राज्यवादी अर्थवाद", सं. रचनाएं दस खंडों में, खंड-6,पृष्ठ- 206, प्रप्र. मास्को, जोर मूल में)

नारी प्रश्न के सम्बन्ध में मार्क्सवादियों की आम अवस्थिति यही रही है कि बड़े पैमाने के मशीनी उत्पादन के कारण मानव इतिहास में पहली बार वे स्थितियां पैदा होनी शुरू होती है जिनमें नारी की दासता

का अंत किया जा सके। किसी ऐतिहासिक-सामाजिक समस्या के समाधान की स्थितियों का अस्तित्व में आने लगना, और उस समस्या के समाधान हो जाने में बहुत अंतर होता है, कई बार तो समस्या के मुकम्मिल व स्थायी समाधान में सदियां लग जाती हैं। नारी-प्रश्न एक ऐसा ही ऐतिहासिक-सामाजिक प्रश्न है जो कि पूंजीवाद की स्थापना के साथ ही हल नहीं होने लगता है बल्कि पूंजीवाद के विकास के साथ वह अपने पूरे आवेग के साथ सही रूप में प्रस्तुत होता है। एंगेल्स लिखते हैं,

> "...आधुनिक वैयक्तिक परिवार नारी की खुली या छिपी हुई घरेलू दासता पर आधारित है और आधुनिक समाज वह निकाय है, जो वैयक्तिक परिवारों के अणुओं से मिलकर बना है। आज अधिकतर परिवारों में, कम से कम मिल्की वर्गों में, पुरूष को जीविका कमानी पड़ती है और परिवार का पेट पालना पड़ता है। इससे परिवार के अंदर उसका आधिपत्य कायम हो जाता है और उसके लिए किसी कानूनी विशेषाधिकार की आवश्यकता नहीं होती। परिवार में पति बुर्जुआ होता है, पत्नी सर्वहारा की स्थिति में होती है। परन्तु उद्योग-धन्धों के संसार में सर्वहारा जिस आर्थिक उत्पीड़न के बोझ के नीचे दबा हुआ है, उसका विशिष्ट रूप केवल तब स्पष्ट होता है, जब पूंजीपति वर्ग के तमाम कानूनी विशेषाधिकार हटाकर अलग कर दिये जाते हैं और कानून की नजरों में दोनों वर्गों की पूर्ण समानता स्थापित हो जाती है। जनवादी-जनतंत्र दोनों वर्गों के विरोध को मिटाता नहीं है, इसके विपरीत, वह तो उनके लिए लड़कर इस विरोध का फैसला कर लेने के वास्ते मैदान साफ कर देता है। इसी प्रकार, आधुनिक परिवार में नारी पर पुरूष के आधिपत्य का विशिष्ट रूप और उन दोनों के बीच वास्तविक सामाजिक समानता स्थापित करने की आवश्यकता तथा उसका ढंग केवल उसी समय पूरी स्पष्टता के साथ हमारे सामने आयेंगे, जब पुरुष और नारी कानून की नजर में बिल्कुल समान हो जायेंगे। तभी जाकर यह बात साफ होगी कि **स्त्रियों की मुक्ति की पहली शर्त यह है कि पूरी नारी जाति फिर से सार्वजनिक उत्पादन में प्रवेश करे** और इसके लिए आवश्यक है कि समाज की आर्थिक इकाई होने का वैयक्तिक परिवार का गुण नष्ट कर दिया जाये।"(फ्रेडरिक एंगेल्स, 'परिवार, निजी सम्पत्ति और राज्य की उत्पत्ति', प्र.प्र. मास्को, 1974,पृष्ठ-90, जोर हमारा)

हमें इस बात में साफ होने की जरूरत है कि व्यापक मेहनतकश 'स्त्रियों की मुक्ति की **पहली शर्त** है कि **पूरी नारी जाति...**सार्वजनिक उत्पादन में प्रवेश करे'। और चूंकि भारत तो क्या विकसित से विकसित पूंजीवाद भी इस **पहली शर्त** को पूरा नहीं कर सका है इसलिए व्यापक मेहनतकश नारी समुदाय के लिए इस ऐतिहासिक सामाजिक समस्या के वास्तविक समाधान की शुरूआत समाजवाद में पहुंचे बगैर नहीं हो पायेगी। समाजवाद ही ऐसी व्यवस्था है जिसमें पूर्ण रोजगार की व्यवस्था हो सकती है, जिसमें हर महिला को घर की

परिधि के बाहर सार्वजनिक उत्पादन में हिस्सेदारी करने का मौका मिल सकता है। अतः वास्तविक अर्थों में नारी मुक्ति किसी भी प्रकार के पूंजीवाद में संभव नहीं है।

व्यवहार में, इतिहास में पाया भी यह गया है कि नारी-मुक्ति का कार्यभार बुर्जुआ-जनवादी क्रांतियों का कार्यभार कभी नहीं बन पाया। न तो किसी महान बुर्जुआ-जनवादी क्रांति ने इस कार्यभार को अपने हाथ में लिया – चाहे वह 16 वीं सदी की डच क्रांति रही हो, या 17 वीं सदी की इंग्लिश क्रांतियां या फिर 18 वीं सदी की अमरीकन अथवा फ्रांसीसी क्रांतियां – और न ही इन क्रांतियों के सिद्धान्तकारों अथवा महान चिन्तकों की चेतना में औरतों की स्वतंत्रता व पुरूषों से बराबरी जैसी कोई चीज थी। यह प्रश्न पूंजीवाद के काफी हद तक विकसित हो जाने के बाद, उसके औद्योगिक चरण में पहुंचने पर प्रस्तुत होने लगा। इसके सैद्धान्तिक प्रस्तोता मेरी वोल्स्टोन क्राफ्ट ('A Vindication of The Rights Of Woman', 1792) की भांति या तो स्वयं मजदूर थे या फिर तरह-तरह के काल्पनिक अथवा वैज्ञानिक समाजवादी। व्यवहारिक मांगों के बतौर चार्टिस्ट आंदोलन एवं 19 वीं सदी के अन्य मजदूर आंदोलनों ने ही पहली बार औरतों के लिए पुरूषों के बराबर राजनीतिक व सामाजिक अधिकार मांगे। 19 वीं सदी की इन मजदूर मांगों को अपनी व्यवस्था के चौखटे के भीतर समेटे रखने की गरज से बुर्जुआ-जनवाद ने नारी मुक्ति के मुद्दे को स्वीकारा और समायोजन के बतौर औरतों को कुछ कानूनी व राजनैतिक अधिकार देने शुरू किये।

इस बात पर शायद कोई विवाद न हो कि 1789 की फ्रांसीसी क्रांति दुनिया की महानतम बुर्जुआ-जनवादी क्रांति है। इस क्रांति ने औरतों को नागरिक मानने से इंकार किया था हालांकि इसकी मांग उस दौरान उठी थी। न तो 1789 के संविधान और न ही 1793 के संविधान ने औरतों को राजनैतिक अधिकार दिये। "मानव और नागरिक अधिकारों की घोषणा" में औरतों के लिए कोई जगह नहीं थी। गैर-मिल्की वर्गों के संघर्षों की एक पूरी सदी बाद न्यूजीलैण्ड वह पहला देश है जहां औरतों को राष्ट्रीय सरकार के चयन के लिए वोट डालने का अधिकार मिला (1893)। और मजदूर संघर्षों के परिणामस्वरूप ही आस्ट्रेलिया (1902), फिर फिनलैण्ड (1906), फिर नार्वे (1913) में औरतों को राष्ट्रीय सरकार के निर्माण में औपचारिक हिस्सेदारी (वोट) करने का अधिकार मिला। 1917 में वोट का अधिकार देने के बाद सोवियत रूस ने मानव इतिहास की अब तक सबसे प्रगतिशील परिवार-संहिता को 1918 में लागू किया। इसमें विवाह के बाहर जन्मी "अवैध" संतानों को अपने माता-पिता पर वैसे ही अधिकार दिये गये जैसे "वैध-पुत्रों" को उपलब्ध होते हैं, शादियों का पंजीकरण अनिवार्य बनाया गया, महिलाओं के लिए तलाक लेना सुगम बनाया गया, विवाहित जोड़े की सम्पत्ति में स्त्री को पुरूष के बराबर अधिकार दिये गये। समलैंगिक सम्बंधों पर जारकालीन रोक हटायी गयी,

इत्यादि। 1922 में सोवियत भूमि संहिता लागू की गयी जिसमें समस्त सार्वजनिक जमीनों पर महिलाओं का उतना ही अधिकार माना गया जितना पुरूषों को दिया गया। उस जमाने में औपचारिक वोट से आगे बढ़ते हुए, सामाजिक एवं आर्थिक दायरे में महिलाओं को ऐसे अधिकार दे देना किसी भी पूंजीवादी राजसत्ता की कल्पना के बाहर की बात थी। आज भी कोई भी पूंजीवादी राजसत्ता, 1918 की सोवियत परिवार-संहिता को समग्रता में लागू करने के लिए तैयार नहीं है।

नारी-प्रश्न और बुर्जुआ-जनवाद के अंतरसम्बंधों की उक्त व्याख्या किसी को एकांगी लग सकती है और वह यह आपत्ति उठा सकता है कि सामान्यतः कोई भी सामाजिक-ऐतिहासिक धारा वह सारा कुछ नहीं दे पाती है जितने का खाका उसके प्रस्तोता व चिंतक खींचते हैं, अतः नारी-प्रश्न के संदर्भ में बुर्जुआ-जनवाद के व्यवहार की समीक्षा इस आधार पर नहीं की जानी चाहिए कि उसने किन परिस्थितियों में, औरतों को कब और कितने अधिकार दिये बल्कि इस आधार पर की जानी चाहिए कि बुर्जुआ वर्ग के चिंतक नारी मुक्ति के बारे में क्या सोचते थे? मामले को समझने के लिए इस विधि को भी अपनाने में हमें कोई गुरेज नहीं है। ग्राचस बाबूफ, काल्पनिक समाजवादियों और चार्टिस्ट आंदोलन के बाद के बुर्जुआ चिंतकों की रचनाओं की समीक्षा के आधार पर बुर्जुआ-जनवाद व नारी-प्रश्न के अंतरसम्बंध पर बात करना बेमानी है क्योंकि 19 वीं सदी के बुर्जआ चिंतकों ने मजदूर-आंदोलन के दबाव में बुर्जुआ-जनवाद के फलक को बढ़ाया है, ठीक वैसे ही जैसे 20 वीं सदी के बुर्जुआ अर्थशास्त्रियों ने कल्याणकारी राज्य की अवधारणा प्रस्तुत की। बुर्जुआ-जनवाद के शास्त्रीय चिंतकों में जान-जाक रूसो का कद काफी ऊंचा है। समाज में औरतों की भूमिका के बारे में उनकी राय को नमूने के बतौर पेश करके हम नारी-प्रश्न पर बुर्जआ-जनवाद की सीमाओं को उजागर करना चाहेंगे।

> "...जितना वे हमारे बिना रह सकती हैं, उसकी तुलना में हम उनके बिना बेहतर जी सकते हैं...अतः महिलाओं की समग्र शिक्षा पुरूषों के सम्बंध में नियोजित की जानी चाहिये। मर्दों को खुश करना, उनके लिए उपयोगी बनना, उनके प्यार व सम्मान को जीतना, बच्चे के रूप में उनकी परवरिश करना, व्यस्क होने पर उनकी देखभाल करना, जरूरत पड़ने पर उन्हें सांत्वना देना और उन्हें ठीक करना, उनकी जिन्दगियों को खुशनुमा व मीठा बनाना, बस यही युगों-युगों से महिलाओं के कर्तव्य रहे हैं और यही उन्हें बचपन से सिखाया जाना चाहिए।'' (अनुपमा राय द्वारा अपनी पुस्तक 'Gendered Citizenship' में उद्धृत, Orient Longman , पृष्ठ - 81)

19 वीं सदी के मजदूर आंदोलन ने औरतों की मुक्ति के लिए बुर्जुआ राजसत्ताओं के सामने जो मांगे पेश की उन्होंने जहां एक ओर बुर्जुआ राजसत्ताओं को मजबूर किया कि वे औरतों को कुछ कानूनी एवं

राजनीतिक अधिकार दें और औरतों की शिक्षा-दीक्षा का कुछ इंतजाम करें वहीं दूसरी ओर पूंजीपति वर्ग ने नारी मुक्ति आंदोलन को अपने वर्चस्व में समेटने की सचेत कोशिशें भी की। ऐसा करने के लिए उसने जो मूल काम किया वह यह था कि इस वर्गीय प्रश्न को एक वर्गेत्तर प्रश्न में बदल दे, इसे एक ऐतिहासिक प्रश्न से एक अनैतिहासिक प्रश्न में बदल दे, जो समस्या मुख्यतः परिवार के आंतरिक संस्कारों के दायरे के बाहर के आर्थिक-सामाजिक- राजनीतिक परिवेश के बदौलत उत्पन्न समस्या है उसे परिवारों की आंतरिक समस्या के बतौर संकुचित करके प्रस्तुत कर दे। 20 वीं सदी के पूर्वार्ध में जब मजदूर आंदोलन मजबूत था तब पूंजीपति वर्ग की यह कोशिश कोई बहुत कामयाब नहीं हो पायी, मगर 20 वीं सदी के उत्तरार्ध में जब स्थितियां प्रतिकूल हो गयी तब बुर्जुआ वर्ग के इस वैचारिक प्रयास ने एक सुनिश्चित रूप ग्रहण कर लिया जिसे सामान्यतः "नारीवाद" की संज्ञा दी जाती है।

बुर्जुआ-नारीवाद बनाम कम्युनिस्ट नारी मुक्ति आंदोलन

अपने जीवनकाल में मार्क्स-एंगेल्स जिन महत्वपूर्ण प्रश्नों से जूझे, उनमें से एक यह था कि मानव इतिहास में औरतें कब और कैसे गुलाम हुई, और उनकी मुक्ति किन स्थितियों में हो सकती है? इस महत्वपूर्ण प्रश्न के उत्तर का अमूर्त जवाब तो मार्क्स-एंगेल्स के पास 19 वीं सदी के पांचवे दशक में ही था, मगर इसका ज्यादा सटीक व वस्तुपरक उत्तर वे तब देने की स्थिति में आये जब उनके पास चार्ल्स डार्विन एवं ल्यूईस एच. मौर्गन तथा अन्य नृ-विज्ञानियों के शोध उपलब्ध हुए। औरत की गुलामी की ऐतिहासिक प्रक्रिया, उसके भौतिक कारण और नारी-मुक्ति की भौतिक-शर्तें क्या हैं, इसकी सबसे व्यवस्थित प्रस्तुति 1884 में फ्रेडरिक एंगेल्स द्वारा लिखी गयी पुस्तक 'परिवार, निजी सम्पत्ति और राज्य की उत्पत्ति' है। तब से लेकर अब तक एक पूरी सदी से ज्यादा समय बीत चुका है। इस दौरान नृ-विज्ञानियों ने मनुष्य जाति की आदिम अवस्था के बारे में बहुत शोध किया है और इससे सम्बन्धित पर्याप्त तथ्य इकट्ठे कर लिए है। जो नये तथ्य व जानकारियां उपलब्ध हो रही है, उन्हें यदि बुर्जुआ-पूर्वाग्रहों से न देखा जाय, बल्कि उनके प्रति एक वैज्ञानिक नजरिया अपनाया जाये तो यह समझ में आता है कि 'परिवार, निजी सम्पत्ति और राज्य की उत्पत्ति' में प्रस्तुत मूल प्रस्थापनायें आज भी सही हैं और उनमें किसी भी प्रकार के संशोधन की आवश्यकता नहीं है। नृ-वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत नये तथ्यों एवं नारी मुक्ति प्रयासों की एक सदी के अनुभवों के आधार पर, नारी-प्रश्न के सम्बन्ध

मे वैज्ञानिक समाजवाद की मूलभूत प्रस्थापनाओं का अधूरापन या अपर्याप्तता उजागर नहीं होती है बल्कि इस प्रश्न पर मार्क्सवाद की प्रस्थापनाओं के अधूरेपन या अपर्याप्तता को दर्शाने की जो कोशिशें की जाती रही है उनमें उनके प्रवक्ताओं की समझदारी की भ्रांतियां, निजी सम्पत्ति की व्यवस्था के प्रति मोहग्रस्तता एवं चिंतन की अधिभूतवादी प्रणाली ही उजागर होती है।

मार्क्सवादियों को इस बात पर कभी पुनर्विचार करने की जरूरत नहीं पड़ी है कि मानव इतिहास में औरत की गुलामी निजी सम्पत्ति, वर्ग समाज एवं राजसत्ता के अस्तित्व में आने से जुड़ी हुई है और निजी सम्पत्ति एवं वर्गीय शोषण के बने रहते इसका अंत नहीं किया जा सकता है। मगर तब भी जब तक ये वांछनीय स्थितियां अस्तित्व में नहीं ला दी जाती हैं तब तक इस प्रश्न पर क्या प्रत्यक्ष कार्यवाही की जायें, इस पर क्या कार्यनीति अपनायी जाये यह प्रश्न मार्क्सवादियों को परेशान करता रहा है। कौमिंटर्न की तीसरी कांग्रेस ने नारी प्रश्न पर दुनिया के कम्युनिस्टों के लिए एक आम कार्यनीति सूत्रबद्ध की। कौमिंटर्न के जमाने में और आज 21 वीं सदी की शुरूआत में वैश्विक स्थितियां काफी कुछ बदल चुकी हैं, लेकिन तब भी कौमिंटर्न की तीसरी कांग्रेस में नारी-प्रश्न पर निरूपित आम कार्यनीति की मुख्य बातें आज भी प्रासंगिक है। एंगेल्स की 1884 की रचना के आधार पर और कौमिंटर्न द्वारा 1921 में नारी-प्रश्न पर तय की गयी आम कार्यनीति की रोशनी में हम आज 21 वीं सदी के पहले दशक में भारत में नारी-प्रश्न का सटीक वस्तुपरक विश्लेषण कर सकते हैं और इसके सम्बंध में एक सही कार्यनीति तय कर सकते हैं।

अपने विश्लेषण की शुरूआत हम नारीवाद से करते हैं। दुनिया में कहीं पर भी नारीवाद ने एक सुव्यवस्थित विचार प्रणाली का रूप ग्रहण नहीं किया है। इसकी विभिन्न किस्में मौजूद हैं और उनमें आपस में कई छोटे-बड़े विरोधाभास पाये जाते हैं। मगर तब भी हर किस्म के नारीवाद की अपनी निश्चित प्रस्थापनाएं हैं जो उन्हें एक दूसरे से अलग करती हैं और ऐसी आम प्रस्थापनाएं भी हैं जो उन्हें मार्क्सवाद के विरोध में खड़ा करती हैं। इसलिए वे एक निश्चित रूप ग्रहण किये हुए मत हैं, जिसकी अपनी निश्चित वर्गीय पक्षधरता एवं पूर्वाग्रह हैं। भारत में मौजूद नारीवादियों की मुख्य मार्क्सवाद विरोधी प्रस्थापनाएं इस प्रकार हैं:

- समाज का मूलभूत बंटवारा वर्गों में नहीं है और शोषण भी मुख्यतः समाज की वर्गीय संरचना के आधार पर नहीं होता है। समाज का मूलभूत विभाजन लैंगिक है और शोषण भी मुख्यतः लैंगिक आधार पर होता है।

- ऐतिहासिक-भौतिकवाद समाज विकास की प्रक्रिया की जो व्याख्या करता है वह गलत है। वर्ग समाजों के अस्तित्व में आने के पहले भी, आदि काल में भी, औरतें पुरूषों द्वारा दबायी और उत्पीड़ित की

जाती थीं। मातृ-सत्ता जैसी कोई अवस्था, मानव इतिहास में कभी रही ही नहीं है। अतः यह मानना कि निजी सम्पत्ति के खात्मे के साथ, समाज के वर्ग विभाजन के उन्मूलन के साथ, नारी-उत्पीड़न भी समाप्त हो जायेगा, गलत समझदारी है। नारी-उत्पीड़न निजी सम्पत्ति के अस्तित्व के साथ चूंकि जुड़ा नहीं है, अतः इसे समाप्त करने के लिए वर्ग संघर्ष से इतर कार्यवाही करने की जरूरत है।

■ मार्क्सवाद लैंगिक अंधता का शिकार है। एक तरफ तो वह सभी स्त्री-पुरूषों को मजदूर, किसान, कर्मचारी, मेहनतकश...जैसे लिंग-निर्पेक्ष प्रवर्गों में ठूंसकर महिलाओं के दोहरे शोषण/उत्पीड़न को हल्का करके देखता है, वहीं दूसरी ओर वह महिलाओं पर सदियों से की जा रही हिंसा को अनदेखा करता है और स्त्री-पुरूष के बीच के अंतर्विरोध को एक गैर-दुश्मनाना अंतर्विरोध के बतौर ही परिभाषित करता है।

■ मार्क्सवाद पितृसत्ता को एक समाज व्यवस्था का दर्जा देने को तैयार नहीं है जैसे उसने दास प्रथा, सामंतवाद, पूंजीवाद इत्यादि को दिया है। यह सही है कि मानव इतिहास में पितृसत्ता का स्वरूप बदलता रहा है मगर अपनी मूल प्रकृति में वह एक विचारधारा एवं मनोवैज्ञानिक संरचना है जो कि उत्पादन सम्बंधों की व्यवस्था से भिन्न है। उत्पादन सम्बन्धों की व्यवस्थाओं के समानान्तर एक समाज व्यवस्था के बतौर पितृसत्ता के वजूद से इंकार करके मार्क्सवादी नारी उत्पीड़न की गहराई में जाने को तैयार नहीं है और उसके प्रति संवेदनशील नहीं हैं।

कुछ उग्र नारीवादियों का मानना है कि पितृसत्ता एक उत्पादन व्यवस्था भी है। यह महिलाओं की श्रम-शक्ति पर पुरूषों के नियंत्रण में निहित है। पुरूष अपने नियंत्रण को बनाये रखने के लिए महिलाओं को मूलभूत उत्पादक संसाधनों से बेदखल-वंचित किये रहते हैं। यदि पितृसत्ता एक उत्पादन व्यवस्था न होती तो यह कैसे सम्भव है कि महिलायें जो कि दुनिया की आबादी के 50% का प्रतिनिधित्व करती हैं, जो कि दुनिया में होने वाले कार्य घण्टों के 2/3 को अंजाम देती हैं विश्व आमदनी का केवल 1/10 हिस्सा पायें और वैश्विक सम्पत्ति में से केवल 1% की मालिक हों।

■ मार्क्सवादी अपने विश्लेषणों के दौरान घरेलू कार्य को संज्ञान में नहीं लेते हैं। घरेलू कार्य के लिए महिलाओं को कोई पारिश्रमिक नहीं मिलता है। इस मामले में गृहस्वामी घरेलू महिलाओं के साथ वैसा ही रिश्ता कायम करता है जैसा प्राचीन रोम में एक गुलाम मालिक अपने गुलामों के साथ कायम करता था। घरेलू कार्य के लिए महिलाओं को गृहस्वामी से पारिश्रमिक मिलना चाहिये। उजरती मजदूरी पर अत्यधिक जोर देने की वजह से मार्क्सवादी मातृत्व जिम्मेदारियों एवं अन्य घरेलू कार्यों को अनुत्पादक श्रम की श्रेणी में धकेल कर नारी-मुक्ति कार्यभारों के बड़े व महत्वपूर्ण प्रवर्ग के प्रति आंखे मूंद लेते हैं।

■ " व्यक्तिगत ही राजनीतिक है," इस नारे को अस्वीकार करके मार्क्सवादी उत्पीड़ित नारी की व्यथा को समझने के लिए तैयार ही नहीं होते। वे निजी मामलों में दिलचस्पी लेने (और दबी हुई महिला के अलगाव और बेचारगी को समझने) के बजाय, सामाजिक स्तर पर ही परिघटनाओं को स्वीकारने के लिए तैयार होते हैं और उसी स्तर पर, वहीं, समस्याओं को हल करने की कोशिश करते रहते हैं। वे ऐसी बातों को समझने में असमर्थ होते है कि – क्यों वह महिला जिसे घर की परिधि के बाहर उत्पादक काम मिला हुआ है, जो वैधानिक अर्थों में अपना कमाती हैं, क्यों घर में तब भी अलगाव ग्रस्त एवं व्यथित जिंदगी जीने के लिए अभिशप्त है। मार्क्सवादी जब तक व्यक्तिगत जीवन की गहराइयों में उतरकर विश्लेषण नहीं करेंगे, जब तक व्यक्तिगत को राजनीतिक नहीं मानेंगे तब तक वे नारी मुक्ति में कोई सार्थक योगदान नहीं कर पायेंगे।

भारत में नारीवादी संगठन/संस्थायें जो भी सामाजिक गतिविधियां/कार्य कर रही हैं, मार्क्सवाद एवं मार्क्सवाद के झंडाबरदार संगठनों/ पार्टियों से उनका विरोध उक्त छः–सात मूल बिन्दुओं पर बनता है। वैसे भारत में समाजवादी-नारीवाद का भी एक रूझान क्रियाशील है जो इस मुख्य नारीवाद से थोड़ा भिन्न है। सामाजिक -नारीवाद की विशेषताओं की चर्चा व आलोचना हम बाद में करेंगे। पहले हम नारीवाद की मुख्य धारा की मार्क्सवाद विरोधी प्रस्थापनाओं के बारे में बात कर लें।

मार्क्सवाद का नारीवादियों से इस मुद्दे पर कोई विवाद नहीं है कि आदि काल में वर्तमान पितृसत्ता (patriarchy) से उल्टे मातृसत्ता (matriarchy) जैसे कोई परिघटना थी। मार्क्सवादी ऐसे समाज के वजूद से इंकार करते हैं जिसमें पूरा शासन ही स्त्रियों के हाथ में रहा हो। बल्कि अपनी पुस्तक 'परिवार, निजी सम्पत्ति और राज्य की उत्पत्ति' के चौथे जर्मन संस्करण की भूमिका में एंगेल्स बाखोफेन की इस प्रस्थापना को गलत करार देते हैं कि आदिकाल में gynaecocracy (स्त्री शासन/मातृसत्ता) की स्थिति थी। मार्क्सवादी मानते हैं कि एक विवाह प्रथा (monogamy) व पितृसत्ता के अस्तित्व में आने के पहले मातृ-अधिकार (mother right) था और इंसान का वंश उसकी माता एवं माता की माताओं के क्रम से तय होता था, मगर ये परम्परायें मातृ सत्ता नहीं हैं। मातृ-परम्परा (matrilineality) के बिना आदि काल का समाज अपना नियोजन नहीं कर सकता था। प्रगतिशील हल्कों में यह भ्रम कि मार्क्सवादी आदिकाल में मातृसत्ता के वजूद पर खूंटा गाढ़ कर खड़े है शायद समझदारी की कमी (मातृ-परम्परा व मातृसत्ता में अन्तर न समझ पाने के कारण) की वजह से उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है। बहरहाल मामले को ठीक करने के लिए इस बात को दोहरा लेना जरूरी है कि निजी सम्पत्ति के उद्भव के पहले के काल में, आदिम कम्यून में, पूरा शासन ही स्त्रियों के हाथ में था

ऐसा कभी नहीं हुआ। वैसे जिन अर्थों में सत्ता या शासन को हम आज समझते हैं वह चीज अति अल्पविकसित तकनीक व अभाव की स्थितियों में संगठित आदि-कम्यूनों में सम्भव ही नहीं थी।

परन्तु मातृसत्ता के वजूद से इंकार करने का तात्पर्य यह नहीं हो सकता कि कोई यह समझ ले कि मार्क्सवादी भी मानने लगे हैं कि वर्गविहीन आदि काल में औरतें, औरतें होने के नाते दबाई व उत्पीड़ित की जाती थीं। आदिकाल में नारी उत्पीड़क प्रथाओं के न तो कोई विश्वसनीय साक्ष्य मिलते हैं न ही वैज्ञानिक तर्क उस निष्कर्ष पर पहुंच पाता है जिस निष्कर्ष पर सिमोन-द-बुआ एवं अन्य नारीवादी लोगों को पहुंचाना चाहते हैं। सिमोन-द-बुआ की आदि समाज के सम्बंध में थीसिस उत्पीड़ित महिलाओं की वर्तमान मनोदशाओं के आधार पर एक मनोवैज्ञानिक बहिर्वेशन (psychological extrapolation) से ज्यादा कुछ नहीं है। वह उस जमाने की तकनीक के स्तर, जीवनयापन के तौर-तरीकों, असुरक्षा व अभाव की स्थितियों को नजरअंदाज करके निर्मित है। उल्टे विश्वसनीय साक्ष्य व वैज्ञानिक तर्क यही हैं कि जब तक कबीलों के पास किसी मात्रा में अधिशेष नहीं इकट्ठा होना शुरू हुआ तब तक सरपरस्ती व प्रभुत्व के सम्बंध नहीं कायम हो सकते थे, हालांकि उस जमाने में कबीलों के बीच इलाके व जीवनयापन के साधानों के लिए युद्ध होते थे और नर बलि दी जाती थी। वैज्ञानिक तर्क महिलाओं की किसी अपरिवर्तनीय मनोवैज्ञानिक संरचना की किसी भी प्रत्यक्ष या अंतर्निहित थीसिस को अस्वीकार करता है और प्रतिपादित करता है कि आर्थिक-सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तनों के साथ-साथ महिलाओं की मनोवैज्ञानिक संरचना बदलती रही है, और आदिकाल में महिलायें दबी-कुचली होने के बजाय कबीलों में बहुत उच्च दर्जे का सम्मान पाती थीं।

किसी को लग सकता है कि यह प्रश्न कि आदिम कम्यूनों में पितृसत्ता का वजूद था या नहीं, एक पंडिताऊ बहस है जिसका वर्तमान युग में नारी-उत्पीड़न व नारी-मुक्ति से कोई सम्बंध नहीं है। मगर यह मुद्दा अकादमिक दायरे तक सिमटा हुआ नहीं है क्योंकि आदिम कम्यूनों में नारी-उत्पीड़न को स्थापित करके ही नारीवादी लैगिक भेद व लैगिक उत्पीड़न/शोषण को वर्ग-भेद व वर्गीय उत्पीड़न/ शोषण से अधिक बुनियादी व प्राथमिक परिघटना के बतौर स्थापित कर पाते हैं। ऐसा करके ही नारीवादी नारी उत्पीड़न की ऐतिहासिक उत्पत्ति को निजी सम्पत्ति व वर्ग समाज के उद्भव से अलग करके स्त्री की शारीरिक संरचना एवं उसकी मनोवैज्ञानिक बनावट पर आधारित करते हैं। और यहीं से वह जमीन तैयार होती है जिस पर खड़े होकर मजदूरों के वर्ग संघर्ष से पृथक एक स्वायत नारी आंदोलन की परिकल्पना की जाती है। इस परिकल्पना में महिलाओं के बीच के वर्ग विभाजन को अनदेखा किया जाता है, उनके बीच के परस्पर विरोधी वर्ग हितों को ढक-मूंद के, वर्गीय संरचनाओं व टकराहटों से ऊपर पितृ सत्ता के खिलाफ एक वृहद-महिला आंदोलन के

निमार्ण की कोशिशें की जाती है। वर्गीय संदर्भों से काटकर महिला अधिकारों को स्थापित करने की यह प्रवृत्ति अंततः अभिजात महिलाओं के हितों का ही प्रतिनिधित्व करने लगती है, यह उन्हीं की समस्याओं की केन्द्रीयता को स्थापित करती है और ऐसे संगठनों/आंदोलनों का नेतृत्व भी अभिजात महिलाओं के हाथों में ही सिमटा रहता है। यह प्रवृत्ति व्यापक मेहनतकश महिलाओं के दीर्घकालिक हितों के विरूद्ध खड़ी हो जाती है, क्योंकि समाज व्यवस्था का आमूल-चूल परिवर्तन एवं निजी सम्पत्ति का खात्मा इसकी कार्यसूची में या तो दर्ज ही नहीं हो पाता या फिर दर्ज होने के बावजूद वह अप्रासंगिक बना रहता है, हाशिये पर पड़ा रह जाता है। ऐसे में पूंजीवादी व्यवस्था बनी रहती है, निजी सम्पत्ति का वजूद बना रहता है और महिलाओं का उत्पीड़न व शोषण जारी रहता है। इस प्रवृत्ति की अधिकतम उपलब्धि इतनी ही हो पाती है कि यह पूंजीवादी व्यवस्था के भीतर कुछ कानूनी सुधार करवा पाने में सफल हो पाती है। इसका मुख्य लाभ अभिजात वर्ग की महिलाओं को मिलता है जिनके लिए पूंजीवाद के भीतर का उदार माहौल सामाजिक व राजनीतिक गतिशीलता के रास्ते खोलता है।

यह सही है कि आज घर और घर से बाहर, दोनों जगह सामान्यतः पुरूषों का प्रभुत्व है, और महिलाएं प्रवंचित, पिछड़ी, दबी-कुचली व कुंठाग्रस्त हैं। यह सही है कि धार्मिक रीति-रिवाज, सांस्कृतिक मूल्य-मान्यताएं महिलाओं को कूपमंडूक व गुलाम बनाती हैं, विधि-विधान उनके उत्पीड़न में सहायक होता है, और सम्पत्ति सम्बन्ध उन्हें प्रवंचना और शोषण का शिकार बनाते हैं अर्थात समग्र सामाजिक स्थितियां व माहौल महिला विरोधी है। मगर यह बात भी इतनी ही सही है कि इन नारी विरोधी स्थितियों और इस नारी विरोधी माहौल का निर्माण समाज के अधिकांश मर्दों ने नहीं किया है और न ही वह किसी भी प्रकार से उनके नियंत्रण में है। इन स्थितियों का निर्माण समाज के मिल्की वर्गों ने एक ऐतिहासिक प्रक्रिया में किया है (अथवा स्वतः उभरती हुई स्थितियों को अपनी वर्गीय आवश्यकताओं के अनुरूप ढाला है) और वर्तमान नारी विरोधी माहौल यदि किसी के नियंत्रण में है तो वह इन सम्पत्तिवान शोषणकारी वर्गों के ही नियंत्रण में है। इसके साथ-साथ यह भी सत्य है कि ये परिस्थितियां और यह माहौल समाज के मजदूर व मेहनतकश पुरुषों के लिए भी उत्पीड़क है, कि यह उनके शोषण को सुगम बनाता है और उनकी स्वतंत्रता व उनके विकास को बाधित करता है। इन उत्पीड़क स्थितियों और माहौल को ध्वस्त करने में ही पुरुष मजदूर व मेहनतकशों के दूरगामी व प्रत्यक्ष हित हैं। अतः इस उत्पीड़क शोषणकारी समाज व्यवस्था के खिलाफ मजदूर वर्ग एवं अन्य मेहनतकश वर्गों का संघर्ष हर मायने में उत्पीड़ित महिलाओं के दूरगामी हितों की पूर्ति करता है, कि वह किसी भी अर्थ में नारी विरोधी या नारी उदासीन नहीं है। उल्टे, जिस हद तक महिलाएं अपने दूरगामी हितों के

प्रति सचेत होकर इस उत्पीड़क-शोषणकारी उत्पादन व्यवस्था के खिलाफ खड़ी होती हैं, उस मात्रा में मजदूरों व अन्य मेहनतकश वर्गों का संघर्ष मजबूत होता है। अतः इतिहासजन्य स्थितियों एवं सम्पत्तिवान वर्गों के वर्चस्व के माहौल में क्रियाशील स्त्री-पुरूष अंतर्विरोध को एक दुश्मनाना अन्तर्विरोध मानना न केवल निरी मूर्खता है, रणनीतिक तौर पर यह महिला मुक्ति की लड़ाई को खड़ी न करने का सबसे बेहतर नुस्खा भी है, क्योंकि ऐसा करके नारी मुक्ति आंदोलन समाज के पुरूषों के खिलाफ लक्षित हो जाता है। इस अवस्थिति की बदौलत जहां एक ओर शोषक एवं शोषित दोनों प्रकार के वर्गों के पुरूष एक से बुरे बना दिये जाते हैं, वहीं दूसरी ओर सभी वर्गों की महिलाओं को एक कर दिया जाता है और उनके बीच वर्गीय अन्तर्विरोध (दुश्मनाना एवं गैर दुश्मनाना दोनों) धूमिल होने लगते हैं। सम्पत्तिवान वर्गों के पुरूष वर्चस्ववादियों के लिए इसे ज्यादा खुशी की बात क्या हो सकती है कि मेहनतकश वर्गों के स्त्री-पुरूष अपने बीच के अन्तरविरोधों को मित्रतापूर्ण तरीकों से सुलझाते हुए नारी उत्पीड़क संस्कारों/ चिंतन में ही अपनी सारी ऊर्जा व्यय कर दें। यदि ऐसा होता रहेगा तो शोषण -उत्पीड़न की यह समाज व्यवस्था सदियों तक चलती रहेगी।

यदि किसी मजदूर आंदोलन के कम्युनिस्ट संगठनकर्ता औरतों की गुलामी के प्रति संवेदनशील नहीं हैं और वे अपने रोजमर्रा के प्रचार में मजदूरों के बीच इस प्रश्न को नहीं खड़ा करते कि औरतों की गुलामी का कैसे अन्त होगा तो ऐसे मजदूर आंदोलन ने अगर कुछ क्रांतिकारी तेवर अपना भी लिए तब भी उसका कोई उज्जवल भविष्य नहीं हो पायेगा। ऐसा इसलिए क्योंकि मजदूरों के बीच विद्यमान पुरूष प्रधान मानसिकता उन्हें भ्रष्ट करती है, उन्हें नैतिक तौर पर कमजोर करती है, शोषण -उत्पीड़न के खिलाफ लड़ने के संकल्प को कमजोर करती है। इस कमी (पुरूष प्रधान मानसिकता) के बने रहते दूसरी अहम दिक्कत यह है कि मजदूर वर्ग में वह कुव्वत ही नहीं पैदा हो पायेगी कि एक वर्ग की हैसियत से वह समाज के सभी शोषित -उत्पीड़ित वर्गों/तबकों का स्वाभाविक नेता बने। ऐसी हालत में मानव इतिहास को आगे बढ़ाने में उसकी सीमाएं बनने लगेंगी और प्रगतिशील आंदोलन को पीछे धकेलने या पूंजीवाद की पुनर्स्थापना की जमीन बनी रहेगी। जो भी कम्युनिस्ट संगठनकर्ता अपने रोजमर्रा के कामकाज में औरतों की गुलामी के प्रति सजग एवं इसके सचेत विरोधी नहीं हैं, वास्तव में उन्होंने महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति की शिक्षाओं को आत्मसात नहीं किया है।

इसमें कोई दो राय नहीं कि एक हद तक विकसित होने के उपरांत पूंजीवाद के भीतर से ही वह भौतिक जमीन तैयार होने लगती है, जिससे कि नारी मुक्ति के लिए रास्ते खुल सकते हैं। मगर पूंजीवाद के बने रहते यह आवश्यक शर्त पूरी हो ही जायेगी ऐसा अनिवार्य नहीं है। विकसित से विकसित पूंजीवाद में भी

यह पूरी नहीं हो पायी है और यह प्रक्रिया भी पूंजीपति वर्ग की इच्छाओं-अनिच्छाओं से परे स्वतः घटती रहती है।

इस संदर्भ में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि किसी समाज में पूंजीपति वर्ग चाहे जैसा भी हो – साम्राज्यवादी,साम्राज्यवादपरस्त, दलाल, उग्र-राष्ट्रवादी, सुधारवादी- राष्ट्रवादी,साम्राज्यवाद का कनिष्ठ/वरिष्ठ साझेदार, ...कोई भी – जैसे-जैसे वह विकसित होता है वह समाज की औरतों का (एक समुदाय की हैसियत से) औरत होने के नाते शोषण व उत्पीड़न करता है। महिलाओं के लैगिक शोषण से पूंजीपति वर्ग मुनाफा कमाता है। नारीत्व उसके लिए सामान बेचने का जरिया होता है। विज्ञापनों में, सेल्स गर्ल के बतौर या पब्लिक रिलेशन कार्यों में आकर्षक, कमसिन महिलाओं का प्रयोग करके पूंजीपति ग्राहकों की अधम् इच्छाओं/कुंठाओं को उभार कर पैसा बनाते हैं। अरबों की आमदनी मुहैया करवाने वाला आधुनिक मनोरंजन उद्योग कामुकता पर टिका है। 'श्रृंगार करके ही कोई औरत अपने नारीत्व को पा सकती है,' इस धारणा को बार-बार स्थापित करके पूंजीपति अरबों-खरबों का उद्योग (श्रृंगार सामग्री, परिधान व फैशन उद्योग) चलाते हैं। वैसे वेश्यावृत्ति को संस्थागत करके छोटी-बड़ी गैर-पंजीकृत फर्मों के जरिये भी सम्पत्तिवान लोग सीधे पैसा बनाते हैं। अपने "सम्मानजनक" कारोबार में भी सरकारी अफसरों एवं अन्य महत्वपूर्ण पुरुषों को काल गर्ल्स द्वारा खुश करके पूंजीपति पैसा कमाते हैं। इन ना-ना रूपों में पूंजीपति वर्ग, औरतों को औरत होने के नाते शोषित करता है। पूंजीवाद जैसी भी सरकार के तहत हो फासिस्ट, सैनिक तानाशाही, जनवादी ... जो भी–उसमें औरतें, औरत होने के नाते इस्तेमाल की जायेंगी। यह सिलसिला तभी थम सकता है जब पूंजीवाद समाप्त कर दिया जाय। पूंजीवाद के साम्राज्यवादी चरण में दाखिल होने पर यह परिघटना बढ़ती है। कोई भी पूंजीवाद इन निकृष्ट गतिविधियों को स्वयं बंद नहीं करेगा क्योंकि औरतों का औरत होने के नाते शोषण पूंजीपतियों की कमाई का एक बड़ा स्रोत है। जन आंदोलनों के दबाव में वह कुछ देर के लिए इन पर लगाम लगाने का नाटक कर सकता है, मगर वह इन्हें स्थायी तौर पर कभी खत्म नहीं करेगा, वह औरतों की जलालत को जारी रखेगा। पूंजीवाद बढ़ते पैमाने पर बेशी मूल्य के दोहन पर आधारित व्यवस्था है। कुल पैदा हुए नये मूल्य में बेशी मूल्य का हिस्सा कितना बड़ा है यह इस बात पर निर्भर करता है कि मजदूर की मजदूरी का हिस्सा कितना छोटा है। मजदूरों की मजदूरी को न्यूनतम स्तर पर बनाये रखने में पूंजीपति का सीधा स्वार्थ होता है और इसके लिए वह सभी सम्भव हथकंडे अपनाता है। इन हथकंडों में पूंजीवाद पूर्व की मूल्य-मान्यताओं का इस्तेमाल शामिल होता है।

औरतों की गुलामी को बनाये रखने वाली मूल्य-मान्यताओं में एक यह है कि पुरूष ही परिवार का मुखिया माना जाता है। पूंजीपति वर्ग ने इस मान्यता को पाला-पोसा है। ऐसा करने में उसके लिए बड़ा फायदा यह रहा है कि वह औरतों की श्रम-शक्ति को सामान्य से कहीं सस्ती दरों पर खरीद सकता है क्योंकि औरतों की कमाई पुरूष की कमाई की 'पूरक' ही समझी जाती है। औद्योगिक पूंजीवाद के शुरूआती चरण में तो महिला मजदूरों को पूंजीपति पुरूष-मजदूरों की तुलना में आधे से भी कम मजदूरी देते थे। यदि केवल महिला मजदूर के वेतन को लिया जाये तो यह उसकी श्रम-शक्ति के पुनः उत्पादन की कीमत नहीं है। इस बुरी स्थिति में बेहतरी तब ही आनी शुरू हुई जब वर्ग सचेत मजदूरों (पुरूष और महिलायें, दोनों) ने 'बराबर काम के लिए बराबर मजदूरी' नारा लगाया और संघर्ष किये। आज भी बहुत सारे पेशों में, बहुत सारी जगहों पर पूंजीपति अनेक मजदूरों को महिला होने के नाते कम वेतन देता है और अपना बेशी मूल्य बढ़ाकर मजदूर वर्ग का उत्तरोत्तर बढ़ते पैमाने पर शोषण करता है। महिला मजदूरों के पिछड़ेपन के इस इस्तेमाल का एक अतिरिक्त लाभ पूंजीपति के लिए यह होता है कि समग्र मजदूर वर्ग के स्तर पर मजदूरों के बीच प्रतियोगिता बढ़ती है और परिणामस्वरूप पुरूष मजदूरों के वेतन में भी गिरावट लायी जा सकती है। अतः महिलाओं के पिछड़ेपन का पूंजीपति को दोहरा लाभ होता है।

आधुनिक पूंजीवादी समाजों में घर के बाहर के ढेर सारे काम ऐसे हैं जो कि कामों के परम्परागत बंटवारे में औरतों के हिस्से आते थे। आज उजरती मजदूरों की हैसियत से महिलायें वही काम अपने घर-ग्राम के बाहर करती हैं। सिलाई-बुनाई मजदूर, सफाई कर्मचारी, नर्सें, घरेलू नौकरानियां, छोटे बच्चों की शिक्षिकाएं इत्यादि ऐसे काम है जिन्हें करने वाले मजदूरों को कम वेतन दिया जाता है। श्रम के परम्परागत बंटवारे से जुड़ी मूल्य-मान्यताओं में ये काम घटिया व फालतू के माने जाते थे। उन्हीं मूल्य-मान्यताओं को नयी स्थितियों में इस्तेमाल करके पूंजीवाद 'वेतन गिरावट' की स्थिति हासिल कर लेता है।

पूंजीपति वर्ग अपने उत्पादन केन्द्रों पर जो काम करवाता है उसका एक हिस्सा वह मजदूर बस्तियों में देता है। इसे महिलाएं एवं बच्चे अपने घरों पर करते हैं और पीस रेट के आधार पर इसकी मजदूरी दी जाती है। इसे घरेलू गतिविधियों का हिस्सा बना कर और परिवार की अतिरिक्त आमदनी के बतौर पेश करके पूंजीपति अत्यधिक सस्ती दरों पर काम को निपटवा लेते हैं। वर्ग चेतना के अभाव में महिला मजदूर एवं बाल मजदूर इस स्थिति को स्वीकारते हैं और यह मांग भी नहीं करते कि यही काम फैक्टरी के भीतर सामान्य दरों पर करवाया जाये। राजनीतिक तौर पर भी पुरूषप्रधान मूल्य-मान्यताएं पूंजीपति वर्ग के लिए फायदेमंद हैं। ऐसी स्थितियों में जहां स्त्री व पुरूष दोनों पूंजीपति के लिए कार्य करते हैं, वहां भी मजदूर यह मानता है कि

उसके दिन की खटाई समाप्त वैसे ही हो चुकी है, जैसे ही वह फैक्टरी से बाहर निकलता है। घरेलू काम में हाथ बंटाने की जरूरत वह कतई नहीं महसूस करता है। पितृसत्तात्मक मूल्य-मान्यताएं उसे ऐसा करने से रोकती हैं। एक ऐसे समय में जब बढ़ती गिनती में महिलाएं प्रत्यक्षतः मजदूर बन रहीं हैं, तब ये मूल्य-मान्यताएं लैंगिक आधार पर सर्वहारा की एकता को तोड़ती हैं जो कि पूंजीपतियों के लिए फायदे की बात है क्योंकि इससे उनकी व्यवस्था दीर्घ आयु होती है। पितृसत्तात्मक मूल्य- मान्यताओं के कारण सर्वहारा की कतारों में एकता के अभाव की समस्या आम मजदूरों तक सीमित नहीं है बल्कि यह उनके अगुआ दस्ते कम्युनिस्ट पार्टी में भी अभिव्यक्त होती है। इस दिक्कत का एक बहुत जीवंत वर्णन लेनिन ने कौमिंटर्न की तीसरी कांग्रेस की तैयारी के समय क्लारा जेटकिन से अपने वार्तालाप में किया था।

> " वे महिलाओं के बीच उद्वेलन एवं प्रचार के कार्य को, उनके जागरण एवं क्रांतिकारीकरण के कार्य को दोयम महत्व का मानते हैं; यदि मामले तेजी के साथ व मजबूती से आगे न बढ़े तो उन्हें ही फटकार सुनायी जाती है। यह गलत है, बुनियादी तौर पर गलत है। यह तो बिलकुल वैसी बात है जिसे फ्रांसीसी ''सिर के बल खड़ी बराबरी'' कहते हैं। हमारे राष्ट्रीय अनुभवों के इस गलत रवैये की जड़ में क्या है? (मैं सोवियत रूस की बात नहीं कर रहा हूं)। अन्तिम विश्लेषण में यह औरतों को एवं उनकी उपलब्धियों को कम करके आंकना है। बस यही बात है! बदकिस्मती से हमें आज भी अपने कामरेडों के बारे में कहना पड़ रहा है कि "एक कम्युनिस्ट को खरोंचो और एक उजड्ड सामने उभरेगा"। बस आपको इतना ख्याल रखना होगा कि आप संवेदनशील हिस्सों को खरोचें – मसलन महिलाओं के प्रति मानसिकता। क्या हमें इससे ठोस सबूत चाहिये जो हमें रोजमर्रा देखने को मिलता है कि पुरूष बड़े इतमिनान से स्त्री को छोटे-छोटे, नीरस, समय व ऊर्जा खपाने वाले कामों में मसलन घरेलू कामों में खटते देखता रहता है, उसके दिमाग को ठस होते देखता रहता है, उसके दिल और उसकी इच्छा शक्ति को डूबते इतमिनान से देखता रहता है? यह कहने की जरूरत नहीं कि मैं उन बुर्जुआ महिलाओं की बात नहीं कर रहा हूं जो समस्त घरेलू काम एवं बच्चों की देखभाल की जिम्मेदारी किराये के नौकरों के मत्थे मढ़ देती हैं। मैं जो बात कह रहा हूं वह बहुलांश महिलाओं के संदर्भ में है, वे मजदूरों की पत्नियां हैं और उनमें ऐसी भी हैं जो स्वयं दिनभर फैक्टरी में काम करके पैसा कमाती हैं।
>
> " बहुत थोड़े पति, सर्वहारा पति भी नहीं, इस बात पर सोचते ही नहीं हैं कि वे अपनी पत्नियों का बोझ व चिंताएं कितनी कम कर सकते हैं, बल्कि पूर्णतः भी समाप्त कर सकते हैं, यदि वे "औरतों के काम" में हाथ बंटा दें। मगर नहीं, यह तो "पति के सम्मान एवं विशेषाधिकार" के विरूद्ध हो जायेगा। वह मांग करता है कि उसे आराम व सुकून मिले। एक औरत की घरेलू जिंदगी

हर रोज छोटी-छोटी महत्वहीन चीजों के लिए किया जाने वाला त्याग है। पति के प्राचीन अधिकार, उसके मालिक एवं देवता के अधिकार प्रच्छन्न रूप में बचे रहते हैं। फिर गुलाम भी वस्तुगत तौर पर अपना बदला लेती है। वह भी छिपे रूप में। उसका पिछड़ापन एवं अपने पति के आदर्शों की कम समझदारी, उसके पति के उत्साह तथा लड़ने के संकल्प में एक बाधा, एक बोझ बने रहते हैं। छोटे-छोटे कीड़ों की तरह ये अगोचर रूप में, धीरे-धीरे, किन्तु बिना शको-शुबहा के, उसे अन्दर से कमजोर व खोखला करते रहते हैं। मैं यह बात केवल किताब में से नहीं बोल रहा हूं, मैं मजदूरों के जीवन को जानता हूं। महिला आवाम के बीच हमारा काम, वैसे सामान्यतः भी हमारा राजनैतिक काम, पुरूषों के बीच अच्छे-खासे शिक्षण की मांग करता है। हमें पार्टी और जनता दोनों ही जगह पुराने गुलाम-मालिक के दृष्टिकोण को उखाड़ फेंकना होगा। यह हमारे राजनैतिक कार्यभारों में से एक है, मगर उतनी ही तत्काल जरूरत का जितना कि महिलाओं के बीच पार्टी के काम के लिए सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक प्रशिक्षण के लिए महिला एवं पुरूष कामरेडों की एक टोली गठित करना।" **(Lenin, 'On The Emancipation of Women' Progress Publishers, Moscow-1977, pp-114-115,** अनुवाद हमारा)

लेनिन के इस उद्धरण के पश्चात इस बात को दोहराने की जरूरत नहीं है कि नारी-समस्या के प्रति कम संवेदनशील होना हमारे मजदूर आंदोलन की एक आम कमी रही है और इसकी बड़ी कीमत हम चुकाते रहे हैं। मगर यह कमी मजदूर आंदोलन,कम्युनिस्ट पार्टियों/संगठनों की है, यह मार्क्सवादी सिद्धान्त में कोई अन्तर्निहित खोट नहीं है, जिस कारण सैद्धान्तिक प्रस्थापनायें बदलनी पड़ें। यह कमी मूलतः इस बात को इंगित करती है कि हजारों वर्षों के उत्पीड़क संस्कारों से मुक्त होने के लिए क्रांतिकारियों को बहुत तीखा आत्म संघर्ष करना पड़ेगा। और यदि वे स्वयं को इसके लिए प्रस्तुत नहीं करते तो कम्युनिस्ट समाज का निर्माण सम्भव नहीं है।

एक अप्रत्यक्ष तरीके से भी पूंजीपति वर्ग मजदूरों के परिवारों की महिला सदस्यों का शोषण करता है। यहां हम नारीवादियों की मार्क्सवाद से उस शिकायत को ले रहे हैं कि मार्क्सवाद घरेलू कार्य को अपने संज्ञान में नहीं लेता है, उसे अनुत्पादक मानता है और घरेलू काम के एवज में गृहणियों के लिए किसी पारिश्रमिक की वकालत नहीं करता है। यह सही है कि मार्क्स ने औरतों के घरेलू कार्य को "अनुत्पादक" माना था। ऐसा कहते हुए मार्क्स किसी भी अर्थ में महिलाओं के घरेलू श्रम की उपयोगिता या उसके महत्व को कम नहीं कर रहे थे। वे इस बात को स्थापित कर रहे थे कि पूंजीवाद की नजर में ये उत्पादक गतिविधियां नहीं हैं क्यों कि ये गतिविधियां सीधे (प्रत्यक्षतः) बेशी मूल्य को पैदा करने में कोई योगदान नहीं करती हैं।

मगर जैसे-जैसे यही गतिविधियां गृह-कार्यों के दायरे से बाहर निकल आती हैं (और यदि वे ही महिलायें किसी पूंजीपति के लिए इन्हीं गतिविधियों को सम्पन्न करती है, मसलन किसी होटल में रसोइये का काम या फिर किसी लौन्डरी में धुलाई इत्यादि) तब ये प्रत्यक्षतः बेशी मूल्य पैदा करने लगती हैं और पूंजीवाद की नजर में उत्पादक बन जाती हैं। यहां हम इस बात को स्पष्ट करने का प्रयास कर रहे हैं कि उत्पादक श्रम एवं अनुत्पादक श्रम का विभाजन पूंजीवाद का विश्लेषण करने के लिए जरूरी है। यह बंटवारा किसी भी मायने में मार्क्सवादियों की अपनी मूल्य-मान्यताओं की अभिव्यक्ति नहीं है। जहां तक मार्क्सवादियों के अपने मूल्यों की बात है वे हर तरह के उपयोगी श्रम को उत्पादक मानते है भले ही उसमें रत्ती भर विनिमय मूल्य न हो। पूंजीपति के लिए जो श्रम ऐसे मूल्य को पैदा नहीं करता जिसका विनिमय हो सके वह बिलकुल बेकार होता है, अनुत्पादक होता है। जब कि साम्यवाद में संक्रमण के लिए यह आवश्यक है कि सर्वहारा की तानाशाही के तहत बढ़ते पैमाने पर, सामाजिक दायरे में, ऐसा श्रम किया जाये जिसका कोई विनिमय मूल्य न होता हो। सुबोतनिक आंदोलन के तहत किया जाने वाला श्रम पूंजीवाद के हिसाब से अनुत्पादक श्रम ही तो था!

इसी मुद्दे का दूसरा आयाम यह है कि पूंजीवाद में जो भी उत्पादन होता है उसमें पूंजीपति मजदूर को आवश्यक श्रम का भुगतान करता है और बेशी श्रम को हस्तगत करता है। बेशी श्रम के प्रवर्ग में आने वाली दौलत मजदूर की मेहनत से पैदा हुई है मगर इसका पारिश्रमिक उसे नहीं मिलेगा क्योंकि आवश्यक श्रम के बतौर उसे अपनी श्रम-शक्ति का मूल्य अदा कर दिया जाता है। श्रम-शक्ति का मूल्य कितना होता है? उतना ही जितना श्रम-शक्ति के पुनरुत्पादन के लिए आवश्यक होता है। अर्थात इसमें मजदूर को उतना मिलता है कि वह एक परिवार पाल सके (अगले दिन काम पर लौट सके और समाज को अगली पीढ़ी के मजदूर तैयार कर दे सके)। स्पष्ट है कि मजदूर को जो मजदूरी मिलती है उसे वह अपने परिवार वालों के साथ बांटता है क्योंकि तभी उसके परिवार का अस्तित्व बरकरार रहता है। एक पुरूष प्रधान समाज में यह बंटवारा अन्यायपूर्ण होगा ही इससे किसी को हैरानी नहीं होनी चाहिये। इसमें भी कोई दो राय नहीं कि छोटे-छोटे, नीरस कामों को करते-करते मजदूर की गृहणी की कमर टूट जाती है। मगर यह कहना ठीक नहीं है कि उसे अपने हिस्से का पारिश्रमिक नहीं मिला गलत है क्योंकि उसे भोजन, कपड़े, आवास, दवा-दारू सब कुछ अल्प मात्रा में मिलता है (मजदूर के वेतन में से)। यदि किसी को लगता है कि उसकी कमरतोड़ मेहनत के लिए यह पर्याप्त पारिश्रमिक नहीं है तो यह बात गलत नहीं है, मगर तब मजदूर की पत्नी को पूंजीपति को पकड़ना पड़ेगा जो कि बेशी मूल्य के रूप में न केवल मजदूर के प्रत्यक्ष श्रम का एक हिस्सा ले गया है बल्कि मजदूर की गृहणी का अप्रत्यक्ष शोषण भी साथ ही साथ करता है। लुबे-लुबाब यह कि मजदूर की गृहणी के शेष पारिश्रमिक

का देनदार पूंजीपति है न कि उसका पति। यदि मजदूर की पत्नी खुद से इंसाफ करना चाहती है तो उसे पूंजीपति के बेशी मूल्य हस्तगत करने के संवैधानिक अधिकार को समाप्त करवाना होगा, यानी कि पूंजीवाद को ध्वस्त करना होगा। नारीवादी, पूंजीपति पर अपना निशाना साधने के बजाय शोषित मजदूर पर हल्ला बोलते हैं। यह नारी मुक्ति नहीं, पूंजीवाद की सेवा है।

"व्यक्तिगत ही राजनीतिक है", इस नारे के तहत नारीवाद परिवार के भीतर औरत के उत्पीड़न, अलगाव व जलालत को मुद्दा बनाते हैं। वह परिवार के भीतर औरत की स्थिति का मार्मिक चित्रण करता है। यह चित्रण सही है और हालात वाकयी बहुत बुरे हैं। हाल के अध्ययनों से पता चला है कि दुनिया में हर छठी महिला अपने पति या घर वालों से पिटती है और ऐसा उत्पीड़न तब भी होता है जब वह गर्भावस्था में होती है। प्रश्न यह है कि इसे रोका कैसे जाये, इस समस्या का स्थायी समाधान क्या हो सकता है? क्या पारिवारिक स्तर पर सलाह-मश्विरे से यह उत्पीड़न समाप्त हो सकता है? क्या समाज में घरेलू उत्पीड़न के विरूद्ध सख्त कानून बनवा कर यह समस्या हल की जा सकती है? या फिर किसी और तरीके से यह समस्या हल की जा सकती है? नारीवाद, समस्या के किसी स्पष्ट समाधान को प्रस्तुत नहीं करता है। समाज-संदर्भित विश्लेषण के अभाव में, एवं परिवार केन्द्रित विश्लेषण करते हुए नारीवाद इस समस्या का जो व्यवहारिक समाधान प्रस्तुत करता है वह या तो सतही प्रतिवाद तक सिमटा रहता है (मसलन संभोग करने एवं न करने की आजादी, गर्भधारण न करने की आजादी, अपनी पसंद के कपड़े पहनने की आजादी, इत्यादि) या फिर उत्पीड़ितों द्वारा आपस में दुख बांटने के कार्यक्रम (मसलन मार्मिक साहित्य की रचना, संगोष्ठियां, इंटरनेट संवाद, व्यक्तिगत संवाद इत्यादि) प्रस्तुत करता है। मार्क्सवाद ऐसी गतिविधियों का विरोधी नहीं है मगर वह इन्हें न तो पर्याप्त मानता है और न ही सार्थक। मार्क्सवाद इस मानवीय समस्या का सांगो-पांग विश्लेषण करता है और सही समाधान भी प्रस्तुत करता है हालांकि यह समाधान दीर्घकाल में ही दिया जा सकता है, तत्काल में नहीं। मार्क्सवादियों के अनुसार व्यक्तिगत परिवार के स्तर पर पीड़ित महिला की केवल मानसिक व शारीरिक मरहम-पट्टी ही की जा सकती है। कि अकेले-अकेले परिवार के स्तर पर घर-घर की इस समस्या का कोई स्थायी हल नहीं है। कारण यह कि घर-घर में छाई हुई इस कुसंस्कृति का स्रोत परिवारों के बाहर की दुनिया है और परिवारों में जो कुछ होता है वह उस संस्कृति का दोहराव भर है जो बाहरी दुनिया में प्रचलित है। मार्क्सवादियों की दलील है कि यदि बाहरी दुनिया में समस्त पूंजीपति वर्ग को यह अधिकार दिया जायेगा कि वह नारी समुदाय का औरत होने के नाते शोषण-उत्पीड़न करके अपनी जन्नत का इंतजाम करे तो घरों के मर्द इस प्रक्रिया को दोहरायेंगे ही क्योंकि उन्हें इस कुसंस्कृति के अलावा कोई सलीके की बातें समाज

द्वारा सिखायी नहीं जाती हैं। दूसरी बात यह यदि सामाजिक स्तर पर धार्मिक पोंगा-पंथ के प्रसार को खुली छूट व प्रोत्साहन दिया जायेगा तो घर-घर की औरतों में हीनताबोध एवं पति-परमेश्वर के संस्कार ही पनपेंगे और उल्टे पुरूष घर की महिलाओं को गाय-बैल की तरह अपनी सम्पत्ति समझेंगे ही। जब तक औरतों के घरेलू उत्पीड़न के ये दो मूल स्रोत बंद नहीं किये जाते और इसके साथ ही साथ जब तक समाज की सभी औरतों के लिए घरों की संकीर्णता के बाहर उत्पादन-वितरण प्रक्रिया में हिस्सेदारी करने के अवसर खोले नहीं जाते तब तक इस समस्या का कोई स्थायी निपटारा नहीं हो पायेगा। एक सामाजिक आंदोलन जिसकी परिणति निजी सम्पत्ति की व्यवस्था का खात्मा है, के द्वारा ही इस समस्या को हल किया जा सकता है। वैसे इस दीर्घकालिक समाधान के दौरान परिवार भी अपना वर्तमान स्वरूप खो देंगे। इस दीर्घकालिक समाधान के अलावा पूंजीवाद को बनाये रखते हुए, कितने ही सख्त कानून बना लिये जायें और सहिष्णुता व इंसानियत की कितनी ही नसीहतें दे दी जायें परिवारों के भीतर स्त्री-उत्पीड़न की समस्या कम या ज्यादा मात्रा में कई रूपों में बनी रहेगी।

क्या पितृसत्ता एक समाज व्यवस्था है?

मार्क्सवादी पितृसत्ता (इसके विभिन्न रूपों को) को दास प्रथा, सामंतवाद, पूंजीवाद जैसी समाज व्यवस्थाओं का अंग मानते हैं मगर वे इसे अपने आप में सम्पूर्ण एवं पृथक समाज व्यवस्था नहीं मानते हैं। मार्क्सवादियों की नजर में इतिहास में अंततोगत्वा निर्णायक तत्व जीवन के लिए जरूरी सामग्री का उत्पादन और पुनरुत्पादन है। इसके लिए मनुष्य एक दूसरे से निश्चित रिश्तों में बंधते हैं। इतिहास के विभिन्न दौरों में उत्पादन व पुनरुत्पादन के इन रिश्तों के जो-जो रूप रहे हैं, समाज का ऊपरी ढांचा उसी के अनुरूप रहा है। परिवार का रूप, उसके भीतर पुरूष प्रधानता और परिवारों के बाहर के सामाजिक परिवेश में भी पुरूष प्रधानता की मौजूदगी समाज के ऊपरी ढांचे का तत्व है, जो कि मूलाधार में जीवन यापन की सामग्री के उत्पादन व पुनरुत्पादन के लिए कायम रिश्तों की प्रकृति से तय होता है। यदि मूलाधार में मूलभूत परिवर्तन होते हैं तब समाज की अधिरचना भी बदलती है और उसके एक अंग के बतौर पितृसत्ता भी बदलती है। अभी हाल के वर्षों में भारत में पितृसत्ता के स्वरूप में एक बहुत बड़ा परिवर्तन आया है और वह यह है कि इसका संयुक्त परिवार रूप काफी तेजी के साथ चरमराया है और उसकी जगह एकल परिवार की पितृसत्ता ने ली है। यह इसलिए हुआ है क्योंकि मूलाधार में सामंती उत्पादन सम्बंधों की जगह पूंजीवादी उत्पादन सम्बंधों ने ले ली है। पितृसत्ता का वजूद और इसके विभिन्न रूप मूलाधार की प्रकृति पर निर्भर करतें हैं। मूलाधार प्रधान है और अधिरचना (अपने घटक तत्व पितृसत्ता समेत) दोयम है। यह दीगर बात है कि पितृसत्ता एवं समग्र अधिरचना

अपनी बारी में मूलाधार पर प्रतिक्रिया करती हैं, उसे प्रभावित करती है और इतिहास के विशेष कालों में यह प्रभाव निर्णायक हो जाता है। मसलन उन स्थितियों में जब राजसत्ताएं एक वर्ग के हाथ से छिन जाती हैं और उसका दुश्मन वर्ग अपनी राजसत्ता कायम कर लेता है। मगर इतिहास के सामान्य प्रवाह में मूलाधार की प्रधानता कायम रहती है और अधिरचना के स्तर का कोई परिवर्तन तभी स्थायी हो पाता है जब वह मूलाधार से मेल खाये। इसलिए पितृसत्ता को एक स्वतंत्र व्यवस्था का दर्जा देकर और मूलाधार को अनदेखा करके केवल पितृसत्ता को ध्वस्त करने की कार्यवाहियों में मार्क्सवादी अपनी ऊर्जा व्यय नहीं करते। वे नारी मुक्ति के सच्चे पक्षधर होते हैं अत: वे पितृसत्ता को ध्वस्त करने के लिए उन तौर-तरीकों व उस रणनीति को अपनाते हैं जो इतिहास संगत हो।

कुछ उग्र नारीवादी, पितृसत्ता को समाज व्यवस्था के ऊपरी ढांचे का अंग मानने के तर्क से आने बढ़कर इसे एक उत्पादन व्यवस्था भी मान बैठती हैं। वे समझती हैं कि पुरूष, महिला की श्रम शक्ति पर नियंत्रण स्थापित करके उनसे काम लेता है। नतीजतन दुनिया की 99 प्रतिशत सम्पत्ति पुरूषों के हाथ में है और वैश्विक आमदनी का 90 प्रतिशत से ज्यादा पुरूषों की जेब में जाता है। ऐसी सिद्धान्तकार स्वयं से यह प्रश्न करना भूल जाती हैं – ''कौन से पुरूष? किस वर्ग/ वर्गों के पुरूष? यदि वे इस दिशा में माथापच्ची करें तो उन्हें पता चलेगा कि दुनिया की अधिकांश आमदनी मेहनतकश वर्गों की जेबों में भी नहीं जाती है और दुनिया की अधिकांश सम्पत्ति के मालिक भी वे नहीं हैं। उन्हें यह भी समझ में आयेगा कि दुनिया के किसी भी मजदूर का अपनी श्रम शक्ति के इस्तेमाल की स्थितियों पर नियंत्रण नहीं है, कि वह ज्यादा से ज्यादा शोषक बदल सकता है (अगर परिस्थितियां अनकूल हों तो) मगर वह अपनी श्रम शक्ति की बिक्री रोककर अपने को शोषण से बचा नहीं सकता है। कुल बात यह कि समाज में वर्गीय संरचनाओं के वजूद को ही अनदेखा करने या इनकी केन्द्रीय भूमिका को न स्वीकारने के चलते उग्र नारीवादी हर प्रकार के शोषण/उत्पीड़न के कट्टर दुश्मन सर्वहारा वर्ग से दूर जा खड़ी होती हैं। पूंजीपति वर्ग की भी दिलचस्पी इसी बात में है कि समाज व्यवस्था का विश्लेषण वर्गीय आधार पर न हो। वर्गीय आधार के अलावा यदि विश्लेषण और किसी भी आधार (कौमी, जातीय, लैंगिक, साम्प्रदायिक, नस्ली...) पर होता है तो यह पूंजीपति वर्ग के लिए फायदेमंद ही होता है क्योंकि इससे उसके दुश्मनों की एकता टूटती है।

नारीवाद के दायरे के भीतर ही या इससे थोड़ा अलग हटकर एक धारा समाजवादी-नारीवादियों की है। यह प्रवृत्ति मार्क्सवादी नारीवाद या भौतिकवादी नारीवाद के नामों से भी जानी जाती है। यह प्रवृत्ति आर्थिक यथार्थ की प्रधानता को स्वीकारती है और किसी भी सामाजिक परिघटना के विश्लेषण में

वर्ग-अंतरविरोधों की केन्द्रियता को स्वीकारती हैं। समाजवादी-नारीवादी पूंजीवाद की मार्क्सवादी आलोचना को स्वीकारते हैं। मगर वे इसमें कुछ जोड़ कर इसकी अपर्याप्तता को खत्म करना चाहते हैं। इन्हें मार्क्सवाद में जो मुख्य कमियां लगती हैं वे इस प्रकार हैं:

1-वह लैंगिक अंधेपन का शिकार है अत: यह उत्पीड़ित महिलाओं के प्रति वैसे संवेदनशील नहीं है जैसे किसी मुक्तिकामी सिद्धान्त/ विचारधारा को होना चाहिए। सामान्य तौर पर समाजवादी-नारीवादियों को लगता है कि मार्क्सवाद की वर्ग-अपचयनवादी (class reductionist) पहुंच नस्ल, जाति, लिंग, सम्प्रदाय की उत्पीड़क संरचनाओं को अनदेखा करती है।

2-श्रम शक्ति पर अत्यधिक जोर देने के कारण मार्क्सवाद अन्य प्रकार के श्रम मसलन मातृत्व की जिम्मेदारियां या घरेलू श्रम को अगर अनदेखा नहीं करता तो भी उसे उत्पादक श्रम नहीं मानता है।

3-मार्क्सवाद मानव मुक्ति का अधूरा खाका खींचता है क्योंकि यह मुक्तिकामी प्रोजेक्ट को आर्थिक व राजनीतिक दायरे तक सीमित रखता है और इसे हमारी जिन्दगियों के आत्मीय, भावानात्मक दायरे में होने वाला उत्पीड़न दिखायी नहीं पड़ता है।

समाजवादी-नारीवाद की मार्क्सवाद से इन तीन मुख्य शिकायतों पर अपनी सफाई देने का यत्न हम यहां नहीं करेंगे क्यों कि हमें ऊपर पेश की गयी दलीलें दोहरानी पड़ेंगी। समाजवादी-नारीवाद की मूल सैद्धान्तिक दिक्कत पर अपनी बात कहने के बाद हम इसके भौतिक वाहकों के संदर्भ में चन्द बातें कहेंगे।

समाजवादी-नारीवाद की मूल सैद्धान्तिक दिक्कत यह है कि यह नारीवाद और समाजवाद का मेल कराने की कोशिश है। कुछ नारीवादियों ने इसे अप्रिय विवाह की संज्ञा दी है और यह भविष्यवाणी की है कि इस विवाह में तलाक अन्तरनिहित है। हमारा भी मानना यही है कि यह दो बेमेल चीजों को जोड़ने की कोशिश है और यह विचार विखंडित हो जायेगा, मगर यह विखंडन अभी आसन्न नहीं है क्योंकि दुनिया और भारत में अभी मजदूर वर्ग का संघर्ष बहुत सुप्त अवस्था में है। अत: समाजवादी-नारीवाद या इसी तरह की अन्य गैर-मार्क्सवादी प्रवृत्तियों से हमें लम्बे समय तक दो-दो हाथ करते रहना पड़ेगा। समाजवादी-नारीवाद का विखंडन इसलिए अनिवार्य है क्योंकि यह दो अलग-अलग, बल्कि विरोधी वर्गों की विचारधाराओं को एक साथ लेकर चलने को कोशिश हैं। एक वर्ग के सचेत प्रतिनिधि यह चाहते हैं कि वर्ग संघर्ष को आगे बढ़ाकर निजी सम्पत्ति पर आधारित समाजों के सिलसिले को समाप्त किया जाय। दूसरा वर्ग यह चाहता है कि वर्ग-विरोधों को ढक कर रखा जाये ताकि यथास्थिति बनी रहे। ऐसी विरोधाभासी स्थिति में फंसे इस विचार

का विखंडन अवश्यम्भावी है, वह भले ही अभी आसन्न न हो। वर्ग-संघर्ष के आगे बढ़ने पर समाजवादी-नारीवाद अपना वजूद कायम नहीं रख पायेगा। यह बिखर जायेगा और इसके झंडाबरदार या तो सर्वहारा के साथ खड़े हो जायेंगे या बुर्जुआ के साथ।

एक सुसंगत विचार होने के बजाय समाजवादी-नारीवादी एक सार-संग्रहवादी विचार है। यह उस समय पैदा हुआ जब विश्व समाजवादी अभियान विपर्यय के दौर से गुजर रहा था और बेतरतीब पीछे हटती हुई सर्वहारा सेना के अनेक योद्धाओं में हताशा घर करने लगी थी। ऐसी स्थितियों में कई लोगों को अपनी विचारधारा पर संदेह होने लगा। वे मार्क्सवाद की अपर्याप्तता की बातें करने लगे। मार्क्सवाद की मूल प्रस्थापनाओं को स्वीकारने के बावजूद ये लोग उसे "पूर्ण" बनाने के लिए उसमें भांति-भांति के विजातीय विचार जोड़ने लगे। नारी उत्पीड़न एवं नारी मुक्ति के प्रवर्ग में शंकालु मार्क्सवादियों की इन सार-संग्रहवादी कोशिशों का परिणाम है – समाजवादी-नारीवाद। समाजवादी-नारीवादी विश्व कम्युनिस्ट महिला आंदोलन की विरासत को अपनी थाति मानने के बजाय उसके प्रति शक-शुबहा की नजर रखते हैं। वे संदर्भ (समाज विशेष के विकास की अवस्था, वर्ग-संघर्ष की जटिलताओं, इत्यादि) को अनदेखा कर इस विरासत में खोट निकालते हैं। ये नारी आंदोलन के स्वायत्त चरित्र पर बल देते हैं और नारी प्रश्न पर कोमिंटर्न द्वारा प्रतिपादित कार्यनीति से इनकी मूलभूत शिकायतें है। वैसे मार्क्सवादी राजनीतिक-अर्थशास्त्र को औरतों के प्रति और संवेदनशील बनाने के प्रयासों में ये उसमें भी कुछ "मौलिक" कांट-छांट भी कभी-कभार करते हैं जिसका नतीजा उसका विद्रूपीकरण होता है।

समाजवादी-नारीवाद के भौतिक वाहकों के संदर्भ में दिक्कतलब बात यह है कि हमारे देश के मार्क्सवादी-लेनिनवादी आंदोलन के कुछ एक संगठन एवं कई कार्यकर्ता इस प्रवृत्ति के वाहक हैं। इस बात की गुंजाइश है कि आने वाले दिनों में यह रूझान हमारे कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आंदोलन में और पैठ बनाये क्योंकि यह सीधे-सीधे उत्तर आधुनिकतावाद भी नहीं है। इसके वाहक महान आख्यानों में विश्वास रखते हैं, और उत्तर आधुनिकतावाद की गैर-ऐतिहासिक, गैर-राजनीतिक पहुंच के आलोचक हैं। वे मानव मुक्ति के अभियान को स्थानीयता व विशिष्टताओं में सीमित करने के पक्षधर नहीं हैं। वे इसके आम चरित्र पर जोर देते हैं। वैचारिक विभ्रम एवं ऊहापोह के जिस चरण से हमारा कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आंदोलन गुजर रहा है उसमें इन विशिष्टताओं को लिए हुए समाजवादी-नारीवाद के फलने-फूलने की पर्याप्त गुंजाइश है। कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों को अपनी कतारों को सचेत करने की जरूरत है कि समाजवादी-नारीवाद नारीमुक्ति के लिए वर्गोपरी स्वायत्त नारी संगठनों की अवधारणा पर जोर देता है। अक्सर इस प्रवृत्ति के वाहक क्रांतिकारी मजदूर

संघर्षों को खड़ा करने के काम को सर्वोच्च प्राथमिकता में न रखते हुए भी नारी आंदोलन पर जोर देते हैं और इसके लिए संगठनों की स्थापना करते हैं। ऐसे भी मौके आये हैं जब इस प्रवृत्ति के वाहकों ने दूसरे कम्युनिस्ट क्रांतिकारी संगठनों के सहयोग से चलने वाले मजदूर संघर्षों के प्रति तटस्थता की नीति अपनायी है।

समाजवादी-नारीवाद के अलावा हमारे कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आंदोलन में नारी मुक्ति के मुद्दे पर एक अन्य दिक्कत नारी संगठनों के प्रति यांत्रिक पहुंच की रही है। बाज मौकों पर हमसे यह गलती होती रही है कि चूंकि नारीवाद एक बुर्जआ विचारधारा है इसलिए हम इसके वाहक संगठनों एवं कार्यकर्ताओं को भी लगे हाथ बुर्जुआ मानकर खारिज करते रहे हैं। ऐसी पहुंच रणकौशलात्मक दृष्टि से सही नहीं है। हमें इन संगठनों की बड़ी हस्तियों एवं आम कार्यकर्ताओं में अंतर करना चाहिये। साम्राज्यवादी संस्थाओं और शासक वर्ग से पैसा लेने वाले वर्ग-सचेत नारीवादियों और आम कार्यकर्ताओं में भेद करते हुए हमें आम कार्यकर्ताओं के साथ दोस्ताना वैचारिक संघर्ष चलाकर उन्हें मार्क्सवाद एवं असली नारी मुक्ति का कायल बनाने की कोशिशें करनी चाहिये। सामान्यतः ये लोग न तो सचेत बुर्जुआ पथगामी होते हैं और न ही शासक वर्ग के सदस्य। इन्हें यांत्रिक तरीके से दुश्मन की पांतों में ठेल देने की गलती हमें नहीं करनी चाहिये। इनके साथ अपने संवाद के दौरान हमें इस बात को भी ध्यान में रखना चाहिये कि मार्क्सवाद के प्रति इनके पूर्वाग्रहों को बनाने में एक बड़ा योगदान सी.पी.आई. एवं सी.पी.एम. के संशोधनवाद का है। जहां तक मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिविर के भीतर के ऐसे संगठनों की बात है जो कि समाजवादी-नारीवादी भटकावों के शिकार हैं, उनके साथ तीखा वैचारिक संघर्ष चलाने की उन्नत जमीन मौजूद है, अतः वहां प्रश्न केवल उस संघर्ष की स्थितियां पैदा कर लेने का है।

वैसे सौभाग्यवश भारत में नारी मुक्ति आंदोलन का जन्म हमारे देश के राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन की गोद में हुआ। इस कारण, अपने जन्म से ही इसका फलक बड़ा रहा है और इसके सरोकार कभी भी वैसे संकीर्ण नहीं रहे हैं जैसे कि पश्चिमी यूरोप या उत्तरी अमेरिका के नारी-आंदोलनों के मामले में हुआ है। भारत में नारी मुक्ति आंदोलन को लगातार विश्व साम्राज्यवादी व्यवस्था एवं उसकी संस्थाओं के प्रति अपना रूख तय करते रहना पड़ा है। अन्य मनोगत कारणों के अलावा भौतिक स्थिति की इस विवशता ने पश्चिम के नारी आंदोलन के भांति इसे एक संकीर्ण प्रतिक्रियावादी आंदोलन में पतित हो जाने से काफी हद तक रोका है।

भारत में औरतों की दशा और कम्युनिस्ट कार्यभार

भारत में नारी समस्या कितनी बड़ी समस्या है इसका जायजा लेने के लिए हम इसके विभिन्न पक्षों की सूची दे रहे हैं (और कहीं-कहीं संक्षिप्त टिप्पणियां करते चल रहे हैं) यह सूची कतई सम्पूर्ण नहीं है, यह मात्र संकेतात्मक है:

- बालिका हत्या: भारत में 1000 पुरूषों के पीछे 933 महिलायें है। सन् 1991 से सन् 2001 के बीच भारत में बच्चियों की हत्या करने की प्रवृत्ति बढ़ी है। 1991 में शिशु लिंग अनुपात (0 से 6 वर्ष के आयु वर्ग में प्रति 1000 बालक, बालिकाओं की गिनती) 945 से घट कर 927 पर पहुंच चुका है। पंजाब में यह 793 के निम्न स्तर पर पहुंच चुका है।

- बलात्कार : दुनिया में जितने बलात्कार होते हैं उनमें से केवल 2.8 प्रतिशत की रिपोर्ट पुलिस में दर्ज करायी जाती है। भारत के लिए ऐसा कोई विशिष्ट सर्वेक्षण उपलब्ध नहीं है इसलिए स्थिति का मोटा अनुमान ही लगाया जा सकता है। बलात्कार के जो मामले पुलिस तक पहुंचते हैं उनमें से वर्ष 2003 में भारत की विभिन्न कचहरियों में 56,343 मामले दर्ज थे। इन्हें निपटाने में न्यायालय अगले 10 वर्ष लगायेंगे। पुराने निर्णयों के आधार पर देखा जाय तो इनमें से 77 प्रतिशत में मुजरिमों को कोई सजा नहीं होगी।

- वैवाहिक बलात्कार : भारत का संविधान पति द्वारा वयस्क पत्नी के साथ जबरदस्ती को बलात्कार नहीं मानता है। यह बात उन स्थितियों पर भी लागू होती है जहां पुरूष घोषित तौर पर रखैलें रखते हैं या फिर वैश्यावृत्ति में लिप्त हैं।

- प्रसव मौत : दुनिया में गर्भावस्था में जितनी मौतें होती हैं उनमें से 1/4 भारत में होती है।

- कुपोषण/बीमारियां,

- दहेज,

- बाल विवाह,

- विधवा त्रासदी,

- वैश्यावृत्ति,

- बाल-वैश्यावृत्ति,

- राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए महिला हिंसा एवं बलात्कार, विशेषकर राजसत्ता द्वारा,
- साम्प्रदायिक एवं जातिवादी उद्देश्यों की पूर्ति के लिए महिलाओं पर हिंसा,
- घरेलू हिंसा,
- आश्रितता, दबाव एवं अभाव भरा पारिवारिक माहौल,
- बहु पत्नी प्रथा (कानूनी एवं गैर-कानूनी),
- परित्यक्ता स्त्रियां,
- तीन तलाक की प्रथा : इसे अधिकांश मुसलमान बहुल देश भी मान्यता नहीं देते हैं, भारत में उल्टे मुसलमान औरतों को "खुला" का अधिकार नहीं है। मुस्लिम पर्सनल लॉ "तौफीज-ए-तलाक" का हक मुसलमान औरतों को नहीं देती है,
- पर्दा प्रथा,
- कार्य स्थल पर यौन उत्पीड़न,
- गर्भावस्था में काम करने की मजबूरी,
- असमान वेतन, इत्यादि।

हम पहले ही अर्ज कर चुके हैं कि हम कोई समग्र सूची नहीं दे रहे हैं बल्कि भारत में नारी उत्पीड़न की प्रकृति को बताने के लिए एक सांकेतिक सूची पेश कर रहे हैं। जिन मुद्दों पर पहले बातें कही जा चुकी हैं उन्हें इस सूची में शामिल नहीं किया गया है ताकि दोहराव से बचा जा सके। इस सूची एवं अन्य जगह गिनाये गये मुद्दों के समाकलित योग से वह विशिष्ट परिघटना बनती है जिसे हम भारत में नारी-प्रश्न कहते हैं, जो कि गरीबी के आम-प्रश्न से एवं वर्गीय प्रश्न से इन्हीं विशिष्टताओं के कारण भारतीय क्रांति की कार्यसूची का एक विशिष्ट मुद्दा बनता है।

प्रश्न है इसके प्रति सही कम्युनिस्ट कार्यनीति का।

इस संदर्भ में सबसे महत्वपूर्ण बात है नारी मुक्ति के भौतिक आधार की। पूंजीवाद जब अपने औद्योगिक चरण में पहुंच जाता है तब वह नारी मुक्ति का भौतिक आधार तैयार करना शुरू करता है। यह प्रक्रिया पूंजीवाद में पूंजीपति की इच्छा/अनिच्छा से स्वतंत्र चलती है जिसे वह किन्हीं राजकीय नीतियों से

अल्पकाल के लिए प्रभावित तो कर सकता है मगर स्थायी तौर पर रोक नहीं सकता। मगर यह प्रक्रिया पूंजीवाद में पूरी नहीं हो पाती क्योंकि उत्पादक शक्तियों के विकास में स्वयं पूंजीवादी उत्पादन सम्बंध बाधक बनने लगते हैं। समाजवाद की स्थापना के बाद ही यह भौतिक आधार पूरी तरह से तैयार हो पायेगा। नारी-मुक्ति की भौतिक जमीन तैयार करने के लिए औद्योगिक पूंजीवाद जो काम करता है वह यह कि-

1-छोटे पैमाने के घरेलू उत्पादन की जगह पर बड़े पैमाने के मशीनी उत्पादन को स्थापित करके वह घरेलू उत्पादन (विशेष तौर पर किसानों एवं हस्त शिल्पियों का) की संकीर्णता व तद्जन्य कूपमंडूकता को तोड़ता है।

2-पारिवारिक सम्बंधों पर पड़े भावुकता के पर्दे को वह नोच कर उतार फेंकता है।

3-सामंती समाज व्यवस्था में महिलायें स्वतंत्र उत्पादक नहीं मानी जाती थी। वे अपने घर के पुरूष की सहायक होती थीं। औद्योगिक पूंजीवाद ज्यादा से ज्यादा तादाद में महिलाओं को सीधे श्रम शक्ति का हिस्सा बनाता है। महिला मजदूर के घर वालों को किनारे करके औद्योगिक पूंजीपति महिला मजदूर की श्रम शक्ति की खरीद का सीधे प्रत्यक्ष अनुबंध करता है। उसका सहायक दर्जा समाप्त हो जाता है। वह आर्थिक जगत की नागरिक बन जाती है। जो रिश्ता बढ़ती गिनती में महिलायें औद्योगिक पूंजीपतियों से कायम करती हैं, वही रिश्ता अन्य पूंजीपतियों के साथ भी कायम होने लगता है।

4-पूंजीवाद, महिला को स्वतंत्र रूप से वेतन देकर उसकी स्वतंत्र पहचान को स्थापित करता है। इन अभागी इंसानों के लिए पहली बार "जीवन की सार्थकता" या "क्षमताओं के सही उपयोग" जैसे प्रश्न खड़े होने लगते हैं। ये प्रश्न उन्हें अपने-अगल बगल के सामाजिक रिश्तों, संस्थाओं और ढांचों के बारे में सोचने के लिए बाध्य करते हैं जो कि उनके विकास को अवरूद्ध करते हैं, उनकी स्वतंत्रता में बंदिशें लगाते हैं।

परन्तु दुनिया में, पूंजीवाद के चौखटे के भीतर, कहीं पर भी यह प्रक्रिया अपनी परिणति तक नहीं पहुंच पायी। यानी कि कहीं पर भी पूंजीवाद का विकास इस रूप में नहीं हुआ कि वह समस्त मेहनतकश महिला आबादी को रोजगार मुहैया करवा दे। दूसरी ओर उसकी ऐसी कोई जरूरत नहीं रही है कि वह बढ़ते पैमाने पर महिलाओं को सार्वजनिक जीवन (घरेलू दासता एवं कूपमंडूकता के बाहर) में खींचे। ऐसी स्थिति में नारी मुक्ति का प्रश्न एक जनवादी प्रश्न होने के बावजूद समाजवाद की कार्यसूची में शामिल हो गया है।

भारत में नारी मुक्ति अभियान के लिए अच्छी बात यह है कि इस समाज का पूंजीवादी विकास हो रहा है, कि यह सामंती जड़ता व ठहराव का शिकार नहीं है। भारत के लिए बुरी बात यह है कि भारत का

पूंजीवादी विकास स्वयं अपने इजारेदाराना चरित्र एवं साम्राज्यवाद के कारण विकृत हो रहा है। मगर तब भी समग्र स्थिति मुक्ति के भौतिक आधार को शनैः शनैः तैयार ही कर रही है और 1991 के बाद भी यह प्रक्रिया थमी नहीं है।

नारी मुक्ति अभियान के संदर्भ में दूसरी महत्वपूर्ण बात है इस काम के लिए उपलब्ध महिलाओं का वर्ग-चरित्र। 21 वीं सदी की शुरूआत में भारत की कामगार आबादी 40 करोड़ (31 करोड़ मुख्य एवं 9 करोड़ आंशिक) आंकी गयी थी। इसमें से संगठित क्षेत्र में 2 करोड़ 80 लाख लोग काम करते हैं। इनमें उद्योग एवं सेवा क्षेत्र के सर्वहाराओं की गिनती 2 करोड़ के करीब है। इसमें महिलायें अल्पमत में हैं और इनमें से भी अधिकांश सेवा क्षेत्र में कार्यरत है। गार्मेन्ट इंडस्ट्री, इलेक्ट्रोनिक्स, घड़ी उद्योग, दवा उद्योग, इत्यादि में इनकी मौजूदगी ठीक-ठाक है। लाईट-इंजीनियरिंग में भी महिलाओं की पैठ शुरू हो चुकी है। लेकिन तब भी संगठित क्षेत्र के औद्योगिक हिस्से में महिलायें एक अल्पमत ही बनती हैं।

भारत के असंगठित क्षेत्र (गैर-कृषि) में करीब 6 करोड़ सर्वहारा हैं। इसके सेवा क्षेत्र में महिलाओं की अच्छी-खासी भागीदारी है। असंगठित सेवा क्षेत्र में महिला सर्वहारा अच्छी-खासी संख्या में हैं। इसके अलावा देश में कालीन उद्योग, स्लेट उद्योग, बीड़ी उद्योग, भवन-निर्माण, खुला खनन इत्यादि में महिलायें अल्पसंख्या में हैं मगर वे छोटी अल्पसंख्या में नहीं हैं।

देश में खेतिहर मजदूर करीब 10.5 करोड़ है। इनमें महिलायें 5 करोड़ हैं। अर्थात किसी भी गणना से देश में समस्त सर्वहारा महिलाओं की गिनती 7 करोड़ से कम नहीं होगी। यह भारत में नारी मुक्ति आंदोलन के लिए बहुत अच्छी बात है क्योंकि इससे इस बात की सम्भावनाएं काफी बढ़ जाती हैं कि नारी मुक्ति आंदोलन अपने दीर्घकालिक कार्यभारों को ज्यादा संजीदगी से ले और वह मौजूदा व्यवस्था के भीतर एक सुधारवादी आंदोलन तक सीमित होकर न रह जाये। परन्तु इस बढ़िया भौतिक आधार का सदुपयोग तभी हो सकता है जब कम्युनिस्ट संगठनकर्ता नारी मुक्ति के प्रश्न को सर्वहारा वर्ग के क्रांतिकारी संघर्ष के साथ सफलतापूर्वक जोड़ें। कम्युनिस्ट महिला संगठनकर्ताओं की बड़ी गिनती, साम्यवाद के बारे में उनकी गहरी समझदारी और वर्ग संघर्ष के अनुभव न केवल नारी आंदोलन के चरित्र को निर्धारित करने में अहम महत्व रखते हैं बल्कि क्रांति को स्थायित्व प्रदान करने एवं उसकी निरंतरता को बनाये रखने में भी ऐसी महिलाओं का योगदान प्रभावशाली होता है। चियाङ चिंङ, रोजा लग्जमबर्ग, क्लारा जेटकिन...की जिन्दगियां इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

उद्योग, कृषि एवं सेवा क्षेत्र की सर्वहारा महिलाएं देश में कुल कामगार महिलाओं में भारी संख्या में हैं। अतः नारी मुक्ति आंदोलन की रीढ़ के बतौर इन्हें संगठित करना कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों के लिए, इस

मोर्चे पर मुख्य कार्यभार बनता है। यह मानना ठीक नहीं है कि नारी मुक्ति आंदोलन समाज की कामगार महिलाओं का ही आंदोलन है, कि इसमें गैर-कामगार महिलाएं शिरकत नहीं करेंगी या यह उनकी विशिष्ट समस्याओं को नहीं उठायेगा। मगर तब भी यह स्पष्ट है कि कामगार महिलाओं में से ही इस आंदोलन की अधिकांश नेता, कार्यकर्ता व योद्धा आयेंगी। इसके साथ ही साथ, भारतीय समाज के विकास के वर्तमान स्तर के आधार पर यह बात भी उतनी ही स्पष्ट है कि सामान्य तौर पर पूंजीपति वर्ग एवं भूस्वामी वर्ग की महिलाएं इस असली नारी मुक्ति आंदोलन में हिमायती नहीं होंगी चाहे उनके निजी जीवन में अपमान व उत्पीड़न कितना ही क्यों न हो। सामान्य तौर पर शासक वर्ग की महिलाएं अपनी नौकरानियों और झोपड़पट्टी की औरतों के आंदोलन से दूर रहेंगी यदि वे इसका प्रत्यक्ष विरोध करने के लिए गोलबंद न भी हों। कुल जमा बात यह कि एक उत्पीड़ित तबके का आंदोलन होने के बावजूद 21वीं सदी में नारी मुक्ति आंदोलन अपने संघटन एवं अपने सरोकारों में वर्गीय झुकाव लिए होगा, सर्वहारा की ओर झुका हुआ। यह सर्वहारा के दीर्घकालिक लक्ष्य का हिमायती आंदोलन होगा। इस आंदोलन के दीर्घकालिक कार्यभार होंगे :

■ सावित्री या सीता को नारी के आदर्श के बतौर स्थापित करने वाले धर्मों के दर्शन व परम्पराओं के वैचारिक एवं सामाजिक प्रभुत्व को नेस्तनाबूत कर देना। एक ऐसे मुल्क में जहां साम्प्रदायिकता नारी उत्पीड़न में प्रत्यक्षतः सहायक है, वहां यह कार्यभार और महत्व ग्रहण कर लेता है। सभी धर्म कूपमंडूकता को प्रोत्साहित करते हैं और औरतों में सेवा व गुलामी के संस्कार भरते हैं। अतः नारी समुदाय पर धर्म के प्रभुत्व को समाप्त किये बगैर नारी मुक्ति सम्भव नहीं है। वैसे किन्हीं विकसित पूंजीवादी मुल्कों, मसलन स्पेन या जापान, में भी यह नारी मुक्ति आंदोलन का अहम कार्यभार बनता है, मगर भारत में धर्म बहुत बड़ी प्रतिक्रियावादी शक्ति है। उदाहरण के लिए भारत में धार्मिक दर्शन जातिवादी मूल्यों-मान्यताओं को पालता-पोसता रहा है और जातिवाद समाज में एक स्वतंत्र भौतिक शक्ति की हैसियत से नारी उत्पीड़न में योगदान करता है। अतः यहां नारी मुक्ति का धर्म के विरूद्ध संधर्ष काफी वृहद एवं जटिल है।

■ इंसान (विशेष तौर पर महिलाएं) एवं सामाजिक रिश्तों को माल के बतौर पेश करने एवं माल की तरह इस्तेमाल करने (Commoditification) के बुर्जुआ अधिकार की समाप्ति के लिए संघर्ष।

■ घरेलू काम का सामाजीकरण एवं शिशु-पालन को एक सामाजिक दायित्व बनाना। इस कार्यभार के तहत न केवल घरेलू कामों के दायरे में आने वाली जिम्मेदारियों को सामाजिक स्तर पर सम्पन्न करने के इंतजाम करना आता है, बल्कि स्त्री-पुरूष के बीच कामों के परम्परागत बंटवारे का अन्त करना भी शामिल है, दूसरे

शब्दों में हर प्रकार के घरेलू कामों में पुरूषों की शिरकत हेतु पुरानी आदतों एवं संस्कारों को समाप्त करने के लिए सांस्कृतिक संघर्ष को उसकी अन्तिम परिणति तक पहुंचाना।

■ समाज की सभी औरतों को वे अवसर मुहैया करवाना जिनकी बदौलत वे घर की चहारदिवारी से बाहर निकल कर सामाजिक उत्पादन में हाथ बंटा सकें। समाज की हर महिला की उसके घरवालों पर आश्रितता की स्थिति को समाप्त करना।

■ इस स्थिति को हासिल करना कि राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन में सभी औरतें पुरूषों के बराबर (और आपस में भी) अधिकारों को वास्तविक अर्थों में प्राप्त कर सकें। इस कार्यभार में यह बात भी शामिल है कि हर औरत को सामाजिक जिम्मेदारियां भी उठानी होंगी।

सुस्पष्ट है कि ऐसे दीर्घकालिक कार्यभारों में शासक वर्ग की महिलाओं की कोई दिलचस्पी नहीं होगी। वे पूंजीवादी स्वर्ग की देवियां बने रहते हुए अपनी सेवा करवाना ज्यादा पसन्द करेंगी बजाय समाजवादी समाज में मेहनतकश नागरिक बनने के। उलटे यदि कोई नारी संगठन इन दीर्घकालिक कार्यभारों को हाशिये पर रख कर अपनी फौरी कार्यवाहियों को अंजाम देता है और इन्हें प्रमुखता में रखते हुए प्रचार नहीं करता है चाहे उसकी दलील यह हो कि "ये तो बाद की बातें हैं" या फिर कोई और, तब तात्कालिकता में जीने वाले ऐसे "वामपंथी" नारी संगठन में शासक वर्गीय महिलाओं की दिलचस्पी पैदा हो सकती है।

भारत में नारी-प्रश्न के प्रति कम्युनिस्ट कार्यनीति को तय करने के लिए तीसरी महत्वपूर्ण बात स्वयं कम्युनिस्ट संगठनों से सम्बंधित है। कोमिंटर्न की तीसरी कांग्रेस ने नारी प्रश्न को विशेष प्रश्न मानने से इंकार किया था और यह निर्देश दिये थे कि हम अपनी ओर से किसी 'विशेष' नारी आंदोलन को संगठित नहीं करेंगे। कोमिंटर्न की तीसरी कांग्रेस ने ये भी निर्देश दिये थे कि कम्युनिस्ट पार्टियों के अंदर अलग से नारी संघों का गठन नहीं होने दिया जायेगा और यही बात हमारे नियंत्रण वाली ट्रेड-यूनियनों पर भी लागू होगी। मगर उक्त बातों के बावजूद कोमिंटर्न इस बात की जरूरत महसूस करता था कि औरतों में काम करने हेतु पार्टियों को विशेष तौर- तरीके अपनाने पड़ेंगे और इसके लिए हरेक पार्टी को अपने भीतर एक विशेष ढांचा (विभाग या कमीशन) गठित करना होगा। यह विभाग/कमीशन पार्टियों में सभी संस्तरों पर मौजूद होगा और पार्टी कमेटियों के नेतृत्व में काम करेगा। जहां भी संभव हो हर स्तर पर पार्टी के नारी-विभाग/ कमीशन की अध्यक्ष/निर्देशक पार्टी कमेटी की सदस्या होनी चाहिए। जहां यह संभव न हो वहां उसे कमेटी की हर बैठक में वैकल्पिक सदस्य (alternative member) की हैसियत से बैठाया जाय और उसके पास अपने

विभाग/कमीशन से सम्बन्धित मामलों में वोट का अधिकार दिया जाय तथा अन्य मामलों में राय देने का अधिकार होना चाहिये। इस अवस्थिति को ग्रहण करने के पीछे कोमिंटर्न ने तीन मुख्य कारण दिये:

> " 1- वह उत्पीड़न जो महिलाओं को अपने रोजमर्रा के जीवन में सहना होता है। यह उत्पीड़न केवल बुर्जुआ पूंजीवादी मुल्कों में ही मौजूद नहीं है बल्कि ये उन मुल्कों में भी पाया जाता है जो कि पूंजीवाद से साम्यवाद में संक्रमण कर रहे हैं और जिनमें सोवियत ढांचा है।
>
> " 2- महिला जन समूह का राजनीतिक पिछड़ापन एवं अत्यधिक पस्ती की स्थितियां, जिसका कारण यह है कि महिलाओं को सदियों तक सामाजिक जीवन से बहिष्कृत करके रखा गया है और पारिवारिक गुलामी में जकड़ कर रखा गया है।
>
> " 3- विशेष जिम्मेदारी-शिशु जन्म-जो कि प्रकृति ने महिलाओं को सौपीं है। इस जिम्मेदारी से सम्बंधित विशिष्टताएं इस बात की मांग करती हैं कि समूह के हित में उनकी ऊर्जा व सेहत को अत्याधिक सुरक्षा प्रदान की जाय।"(Third Congress Of The Communist International, 'Methods And Forms Of Work among Communist Party Women', Theses, अनुवाद हमारा)

कम्युनिस्ट पार्टियों के भीतर नारी-प्रश्न पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है, यह 20 वीं सदी के अंत एवं 21 वीं सदी के आरम्भ के अनुभवों से भी सत्यापित होता है। जनसमुदाय के बीच कम्युनिस्ट काम करने एवं पार्टी निर्माण में हाल के वर्षों में सबसे बेहतरीन सफलताएं नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) को मिली हैं। अपने अनुभवों के सार-संकलन के बतौर नेकपा (माओवादी) के शीर्ष नेतृत्व की स्वीकारोक्ति है कि–

- पार्टी में और जनसेना में 25 वर्ष की आयु तक पहुंचते-पहुंचते महिला नेता विलुप्त होने लगती हैं जब कि पुरूष 40 वर्ष की आयु के ऊपर भी विकसित होते हुए पाये जाते हैं।

- बच्चा पैदा करने से महिला का राजनीतिक जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। हर नये शिशु के साथ वह घरेलू गुलामी में और-और फिसलती जाती है। यह समस्या उन स्थितियों में भी काफी हद तक बनी रहती है जहां हमारे आधार क्षेत्र हैं और महिला नेताओं को मातृत्व कामों में मदद मिलती है।

- महिलाओं पर बच्चे पैदा करने के लिए भारी दबाव होता है। यह दबाव न केवल व्यापक समाज का होता है बल्कि पार्टी के भीतर से कुछ पतियों का भी होता है।

- पार्टी जीवन में दाखिल होने के बाद भी महिलायें श्रम विभाजन की उन पुरानी परम्पराओं से चिपकी रहती हैं जिनमें बौद्धिक कार्य पुरूषों के जिम्मे आता है। पार्टी-महिलायें सैद्धान्तिक ज्ञान का गम्भीर अध्ययन नहीं करती हैं अतः अन्तः पार्टी संघर्षों में उनकी भूमिका पुछल्लावादी हो जाती है, वे अक्सर ही अपने पति की राजनीतिक लाइन की अंध भक्ति करती हुई पायी जाती हैं और उनके पास अपनी राजनीतिक समझदारी नहीं होती है। (The Worker एवं 'Monthly Review' में छपे कामरेड पार्वती के लेख के आधार पर)।

हमारे देश के कम्युनिस्ट क्रांतिकारी आंदोलन के संगठनों की स्थिति नेकपा (माओवादी) से बेहतर नहीं है। शायद ही कोई संगठन यह दावा कर सके कि वह ऐसी या इससे बुरी स्थिति में नहीं है। भारत में पार्टी एवं जनसंगठन स्तर पर महिला-नेताओं का अभाव तो स्पष्टतः दिखाई पड़ता है। संगठनों में महिला-कार्यकर्ताओं की भर्ती एवं उनका स्थायित्व एक बड़ी समस्या बनी हुई है। यह समस्या विशेष ध्यान दिये बगैर ठीक होने वाली नहीं है। यदि कोमिंटर्न की विकसित पार्टियों को पार्टी ढांचे के भीतर (एवं उसके मातहत) इसके लिए विशेष विभाग/आयोग बनाने पड़े तो हमारी चेतना तो कहीं ज्यादा पिछड़ी हुई है। सदियों के नारी-उत्पीड़न ने न केवल औरतों को गुलाम व पस्त बनाया है बल्कि उसने पुरूषों को भी इस मामले में असंवेदनशील बनाया है, नतीजतन आम तौर पर इस समस्या का एहसास ही बहुत उथला है। ऐसे में आत्म संघर्ष एवं पार्टी-संगठनों एवं उनके कार्यकर्ताओं का रूपांतरण और भी पीछे चला जाता है।

आज इतिहास ने नारी-प्रश्न का समाधान, समाजवादी प्रोजेक्ट के साथ नत्थी कर दिया है। ऐसे में इस मुद्दे पर अपनी बात को समेटते वक्त अनेसा आरमां के शब्द दोहरा लेना प्रासंगिक होगा,

> ''यदि साम्यवाद के बिना महिलाओं की मुक्ति की परिकल्पना सम्भव नहीं है, तब महिलाओं की पूर्ण मुक्ति के बिना साम्यवाद की परिकल्पना भी सम्भव नहीं है।"

■ ■ ■

कम्युनिस्ट पार्टी के महिलाओं के बीच काम करने के तरीके और रूपः थीसिस

(कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की तीसरी कांग्रेस द्वारा स्वीकृत 8 जुलाई, 1921)

बुनियादी सिद्धान्त :

1- कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की तीसरी कांग्रेस, कम्युनिस्ट महिलाओं के दूसरे अंतर्राष्ट्रीय कांफ्रेंस के साथ तालमेल बनाते हुए, फिर से पहले और दूसरे कांग्रेस के इन फैसलों को स्वीकार करती है कि पूर्व और पश्चिम की सभी कम्युनिस्ट पार्टियों को मजदूर महिलाओं के व्यापक समुदाय को कम्युनिस्ट विचारों से शिक्षित करते हुए और सोवियत सत्ता के लिए संघर्ष में उनको खींचते हुए, महिला सर्वहारा के बीच में काम बढ़ाना चाहिए ताकि मजदूरों के सोवियत गणराज्य का निर्माण हो सके।

पूरी दुनिया में मजदूर वर्ग और परिणामस्वरूप मजदूर महिलाएं, सर्वहारा की तानाशाही के प्रश्न से जूझ रही हैं।

पूंजीवादी अर्थव्यवस्था एक बंद गली में दाखिल हो चुकी है; पूंजीवाद के दायरे में अब उत्पादन शक्तियों का और विकास संभव नहीं है। मेहनतकशों के जीवन में तेज गिरावट, उत्पादन को बहाल करने की बुर्जुआ की असमर्थता, सट्टेबाजी में वृद्धि, उत्पादन का छिन्न-भिन्न होना, बेरोजगारी, कीमतों में उतार-चढ़ाव और कीमतों और मजदूरी के बीच की खाई, इन सबसे हर जगह वर्ग संघर्ष अवश्यंभावी तौर पर तीखा हो रहा है। यह संघर्ष तय करता है कि कौन और कैसी व्यवस्था उत्पादन का नेतृत्व, प्रशासन और संगठन संभालेगी – या तो मुट्ठीभर पूंजीपति या कम्युनिज्म के सिद्धान्त पर आधारित मजदूर वर्ग।

नवोदित सर्वहारा वर्ग को, आर्थिक विकास के नियमों के अनुकूल उत्पादन तंत्र को अपने हाथों में लेना चाहिये और नये आर्थिक रुपों का सृजन करना चाहिये। केवल तब ही वह ऐसी स्थिति में आ पायेगा कि उत्पादक शक्तियों के अधिकतम विकास को प्रोत्साहित कर सके, जिसे पूंजीवादी उत्पादन की अराजकता ने रोका हुआ है।

जब तक सत्ता बुर्जुआ वर्ग के हाथ में है, सर्वहारा उत्पादन को संगठित नहीं कर सकता है। जब तक सत्ता उनके हाथों में है, ऐसा कोई तरीका या सुधार नहीं है जिसके द्वारा पूंजीवादी देशों की जनतांत्रिक या समाजवादी सरकारें परिस्थिति को संभाल सके और पूंजीवादी आर्थिक व्यवस्था के चरमराने की वजह से मेहनतकश महिला और पुरुषों पर होने वाली भयंकर और असहनीय कठिनाइयों को समाप्त किया जा सके। सत्ता पर कब्जा करके ही उत्पादकों का वर्ग

उत्पादन के साधनों का स्वामी हो सकता है; और इस तरह मेहनतकश आवाम के हित में आर्थिक विकास के निर्देशन को संभव बना सकता है।

सर्वहारा और कालातीत पूंजीवादी दुनिया के बीच होने वाले अवश्यमभावी और अंतिम युद्ध को तेज करने के लिए, मजदूर वर्ग को तीसरे इंटरनेशनल द्वारा चिह्नित रणकौशलों को कसकर और बिना हिचकिचाहट के पकड़ना चाहिए। सर्वहारा की तानाशाही बुनियादी और तात्कालिक लक्ष्य है और यह दोनों लिंगों के सर्वहारा के लिए काम के तरीके और संघर्ष की दिशा को निश्चित करता है।

पूंजीवादी देशों में सर्वहारा के सामने सर्वहारा की तानाशाही के लिए संघर्ष सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न है। उन देशों में जहां तानाशाही पहले से मजदूरों के हाथ में है, कम्युनिस्ट समाज का निर्माण निर्णायक प्रश्न बना हुआ है। कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की तीसरी कांग्रेस दुहराती है कि महिला सर्वहारा और अर्ध-सर्वहारा महिलाओं के व्यापक जनसमूह की सक्रिय भागीदरी के वगैर सर्वहारा न तो सत्ता पर कब्जा कर सकता है और न ही कम्युनिज्म तक पहुंच सकता है।

साथ ही, कांग्रेस एक बार फिर सभी महिलाओं का ध्यान इस तथ्य की ओर खींचती है कि महिलाओं की मुक्ति के लिए किए जा रहे सभी प्रयासों को अगर कम्युनिस्ट पार्टी का सहयोग नहीं मिलेगा तो बराबर के इंसान के रूप में महिलाओं के अधिकारों की मान्यता और उनकी वास्तविक मुक्ति व्यवहार में नहीं जीती जा सकती है।

2- खास तौर पर वर्तमान हालात में, यह मजदूर वर्ग के हित में है कि कम्युनिज्म के लिए लड़ाई में सर्वहारा की संगठित पांतों में महिलाएं शामिल हों। जैसे-जैसे आर्थिक अव्यवस्था वैश्विक स्तर पर बढ़ रही है और इसके परिणाम सभी शहरी और ग्रामीण गरीबों पर कहर ढा रहे हैं, बुर्जुआ पूंजीवादी देशों में सामाजिक क्रांति का प्रश्न सर्वहारा के सामने और भी तीखे ढंग से पेश हो रहा है, जबकि सोवियत रूस के मजदूर वर्ग के सामने नयी कम्युनिस्ट लाइन पर राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के गठन का कार्यभार खड़ा है। महिलाओं की सक्रिय, सचेत और दृढ़ भागीदरी यह सुनिश्चित करेगी कि ये लक्ष्य आसानी से हासिल हो।

जहां सत्ता पर कब्जे का प्रश्न सीधे आ खड़ा हुआ है, वहां आंदोलन से बाहर पड़ी निष्क्रिय मेहनतकश महिलाओं (गृहणियां,दफ्तरों में काम करने वाली महिलाएं और किसान महिलाएं जो कि अभी भी बुर्जुआ विश्व दृष्टिकोण,चर्च और परम्पराओं के प्रभाव में हैं और कम्युनिज्म के लिए होने वाली महान मुक्ति की लड़ाई से जिनका कोई संबंध नहीं है) से क्रांति को होने वाले खतरे की बात कम्युनिस्ट पार्टी को ध्यान में रखनी होगी। आंदोलन से बाहर जो महिलाएं हैं वे अवश्यंभावी तौर पर बुर्जुआ विचारों की गढ़ हैं और पूरब और पश्चिम दोनों जगह प्रतिक्रांतिकारी प्रचार का ग्राह्य समूह हैं। हंगरी की क्रांति का अनुभव, जहां महिलाओं में वर्ग चेतना के अभाव ने इतनी दुखद भूमिका अदा की, दूसरी जगहों के सर्वहारा के लिए जो कि सामाजिक क्रांति के रास्ते पर चल रहे हैं, एक चेतावनी है।

दूसरी तरफ, सोवियत गणराज्य की घटनाएं इस बात की ठोस उदाहरण हैं कि गृह युद्ध, गणराज्य की सुरक्षा और सोवियत जीवन के अन्य सभी हिस्सों में मजदूर और किसान महिलाओं की भागीदारी कितनी जरूरी है। मजदूर और

किसान महिलाओं ने सोवियत गणराज्य में कितनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है यह प्रतिरक्षा संगठित करने में, घरेलू मोर्चे को मजबूत करने में, भगोड़ेपन और सभी तरह के प्रतिक्रांतिकारी कार्यवाहियों, तोड़-फोड़ आदि से लड़ने में देखी जा चुकी है। दूसरे देशों को मजदूरों के गणराज्य के अनुभव का अध्ययन करना चाहिए और उससे सीखना चाहिए।

अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि महिला आबादी के व्यापकतम संस्तरों को अपने प्रभाव में लेने के लिए कम्युनिस्ट पार्टियों को पार्टी के भीतर विशेष ढांचे खड़े करने चाहिए और महिलाओं को बुर्जुआ विश्व दृष्टिकोण से मुक्त करवाने के लिए, उन्हें साम्यवाद के दृढ़ योद्धाओं के बतौर शिक्षित करने के लिए व परिणामस्वरूप उनके पूर्ण विकास हेतु; महिलाओं तक पहुंचने के विशेष तौर-तरीके स्थापित करने होंगे।

3- महिला सर्वहारा के बीच में पार्टी कार्य में सुधार को पूरब और पश्चिम, दोनों ही जगह की कम्युनिस्ट पार्टियों का तात्कालिक कार्यभार चिह्नित करते हुए, कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की तीसरी कांग्रेस साथ ही मेहनतकश महिलाओं को बताती है कि सदियों की दासता, अधिकारविहीनता और गैर बराबरी से उनकी मुक्ति ***सिर्फ कम्युनिज्म की विजय द्वारा संभव है***, और बुर्जुआ नारी आंदोलन महिलाओं को वह दिलाने में पूर्णतः अक्षम है जो कि कम्युनिज्म देता है। जब तक पूंजी की सत्ता और निजी संपत्ति का अस्तित्व है तब तक पति पर निर्भरता से नारी की मुक्ति अपनी संपत्ति और अपनी मजदूरी के मालिक होने और अपने बच्चे के भविष्य के बारे में अपने पति के साथ बराबरी के आधार पर निर्णय लेने से आगे नहीं जा सकती।

सबसे उग्र नारीवादी मांग – बुर्जुआ संसदवाद के दायरे में स्त्री को मताधिकार दिलाना – स्त्री, खासतौर पर संपत्तिविहीन वर्गों की, की वास्तविक बराबरी के प्रश्न को नहीं सुलझाती। सभी पूंजीवादी देशों में जहां हाल के वर्षों में बुर्जुआ ने स्त्री-पुरुष के बीच औपचरिक बराबरी को मान्यता दी है वहां मेहनतकश महिलाओं के अनुभव से यह साफ हो जाता है। वोट, परिवार और समाज में महिला की दासता के मूलभूत कारण को समाप्त नहीं करता। कुछ बुर्जुआ राज्यों ने सिविल विवाह को, भंग न किए जा सकने वाले विवाह से विस्थापित किया है। लेकिन जब तक सर्वहारा महिला पूंजीपति और रोटी कमाने वाले अपने पति पर आर्थिक तौर पर निर्भर रहती है, और मातृत्व और बचपन की सुरक्षा का मुकम्मिल इंतजाम नहीं हो जाता है और सामाजिक शिशुपालन और शिक्षा की विस्तृत व्यवस्था नहीं हो जाती, तब तक यह विवाह में महिला की बराबरी की स्थिति नहीं कायम कर सकता और न ही स्त्री-पुरुष के संबंधों की समस्या हल कर सकता है।

औपचारिक तौर पर सतही बराबरी के बरक्स महिलाओं की वास्तविक बराबरी सिर्फ कम्युनिज्म में प्राप्त की जा सकती है जब महिला और मेहनतकश वर्ग के सभी अन्य सदस्य उत्पादन और वितरण के साधनों के सामूहिक स्वामी बन जायेंगे और उनको प्रशासित करने में भागीदारी करेंगे और महिला श्रमिक समाज के सभी सदस्यों के साथ काम करने के कर्तव्य का कंधे से कंधा मिलाकर निर्वाह करेंगी; दूसरे शब्दों में यह उत्पादन और शोषण की पूंजीवादी

व्यवस्था जो कि मानव श्रम के शोषण पर आधारित है, के खात्मे के द्वारा ही और कम्युनिस्ट अर्थव्यवस्था के संगठन द्वारा ही प्राप्त होगी।

सिर्फ कम्युनिज्म ही वैसी परिस्थिति तैयार करता है जिसमें कि स्त्री के प्राकृतिक कर्म – मातृत्व – और उसकी सामाजिक जिम्मेदारियों के बीच का टकराव, जिससे कि समूह के लिए रचनात्मक काम करने में बाधा पैदा होती है, समाप्त हो पायेगा और श्रम समूह के लक्ष्यों और जीवन के साथ मजबूती से और नजदीकी के साथ तालमेल बैठाते हुये एक स्वस्थ और संतुलित व्यक्तित्व का सौहार्दपूर्ण और बहुआयामी विकास पूरा हो सकेगा। सभी महिलाएं जो कि नारी मुक्ति और उसके अधिकारों को मान्यता दिलाने के लिए लड़ती हैं, उनका उद्देश्य कम्युनिस्ट समाज का निर्माण होना चाहिए।

लेकिन एक वर्ग के बतौर सर्वहारा का भी अंतिम उद्देश्य साम्यवाद है और इसलिए दोनों पक्षों के हित में है कि दोनों संघर्ष 'एकल और अविभाज्य' संघर्ष के रूप में लड़े जाएं।

4- कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की तीसरी कांग्रेस क्रांतिकारी मार्क्सवाद के इस मूल अवस्थिति का समर्थन करती है कि स्त्री-प्रश्न जैसा कोई 'विशेष' प्रश्न नहीं है, और न ही कोई विशेष नारी आंदोलन होना चाहिए, कि मेहनतकश महिलाओं और बुर्जुआ नारीवाद के बीच किसी प्रकार के गठबंधन या सामाजिक-समझौतेबाजों व अवसरवादियों के ढुलमुल या साफ तौर पर दक्षिणपंथी रणकौशलों के समर्थन से सर्वहारा की ताकतें कमजोर होंगी, जिसके परिणामस्वरुप नारी की पूर्ण मुक्ति का वह महान क्षण और ज्यादा विलंबित हो जायेगा।

कम्युनिस्ट समाज की प्राप्ति विभिन्न वर्गों की महिलाओं के एकजुट प्रयास से नहीं होगी, बल्कि सभी शोषितों के एकजुट संघर्ष से होगी।

सर्वहारा महिलाओं को अपने हित में कम्युनिस्ट पार्टी के क्रांतिकारी रणकौशलों का समर्थन करना चाहिए और जनकार्यवाही और राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय पैमाने पर पैदा होने वाले हर प्रकार और रूप के गृह-युद्ध में जितना संभव हो उतनी सक्रिय व प्रत्यक्ष हिस्सेदारी करनी चाहिए।

5- अपने उच्चतम स्तर पर दोहरे उत्पीड़न (पूंजीवाद के द्वारा और घर के भीतर परिवार पर निर्भरता के द्वारा) के खिलाफ संघर्ष को अंतर्राष्ट्रीय चरित्र ग्रहण करना चाहिए, जिसे दोनों लिंगों के सर्वहारा को अपनी तानाशाही और सोवियत व्यवस्था के लिए संघर्ष (तीसरे इंटरनेशनल के बैनर तले लड़ा जाने वाला) में विकसित करना चाहिए।

6- कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की तीसरी कांग्रेस बुर्जुआ नारीवादियों के साथ किसी भी तरह से सहयोग या समझौते के खिलाफ मेहनतकश महिलाओं को चेतावनी देती है। साथ ही सर्वहारा महिलाओं के लिए यह साफ करती है कि यह भ्रम कि दूसरे इंटरनेशनल या उसके नजदीकी अवसरवादी तत्वों को समर्थन देने से नारी मुक्ति के उद्देश्य को कोई नुकसान नहीं पहुंचेगा, दरअसल सर्वहारा के मुक्ति संघर्ष को बहुत क्षति पहुंचायेगा। महिलाओं को कभी नहीं भूलना

चाहिए कि महिलाओं की दासता की जड़ बुर्जुआ व्यवस्था में है और इस दासता का अंत करने के लिए नये कम्युनिस्ट समाज को अस्तित्व में आना होगा।

मेहनतकश महिलाएं जो समर्थन दूसरे और ढाइवें इंटरनेशनल के ग्रुपों और पार्टियों को देती है उससे सामाजिक क्रांति में अवरोध पैदा होता है, नई व्यवस्था के आगमन मे देरी होती है। अगर महिलाएं दृढ़ता से और बिना समझौते के दूसरे और ढाइवें इंटरनेशनल से अलग हो जाती हैं तो सामाजिक क्रांति की विजय ज्यादा सुनिश्चित होगी। कम्युनिस्ट महिलाओं को कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के क्रांतिकारी रणकौशलों से भयभीत सभी ताकतों की भर्त्सना करनी चाहिये और कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की गोलबंद कतारों में से उन्हें बाहर रखने के लिए अडिग रहना चाहिए।

महिलाओं को याद रखना चाहिए कि दूसरे इंटरनेशनल ने महिलाओं की पूर्ण मुक्ति के संघर्ष के आगे बढ़ाने वाले किसी संगठन की स्थापना का प्रयास भी नहीं किया। समाजवादी महिलाओं का अंतर्राष्ट्रीय एकीकरण दूसरे इंटरनेशनल के ढांचे के बाहर स्वयं मजदूर महिलाओं के प्रयासों से शुरू हुआ। समाजवादी महिलाएं जिन्होंने महिलाओं के बीच में विशेष कार्य किये उनको न तो उचित स्थान मिला, न ही प्रतिनिधित्व और न ही मतदान के पूरे अधिकार।

1919 में अपनी पहले कांग्रेस में ही तीसरे इंटरनेशनल ने सर्वहारा तानाशाही की प्राप्ति के संघर्ष में महिलाओं को शामिल करने के प्रश्न पर अपनी सोच का सूत्रीकरण किया। कांग्रेस ने महिला कम्युनिस्टों की एक कांफ्रेंस बुलाई और 1920 में महिलाओं के बीच काम करने के लिए एक अंतर्राष्ट्रीय सचिवालय की स्थापना हुयी जिसकी एक स्थायी प्रतिनिधि कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के कार्यकारिणी में शामिल की गयी। सभी वर्ग सचेत मजदूर महिलाओं को दूसरे इंटरनेशनल से बिना शर्त संबंध तोड़ लेने चाहिए और कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की क्रांतिकारी लाइन को अपना समर्थन देना चाहिए।

7- फैक्टरियों, दफ्तरों और खेतों में काम करने वाली महिलाओं को कम्युनिस्ट इंटरनेशनल को अपना समर्थन व्यक्त करने के लिए कम्युनिस्ट पार्टियों से जुड़ना चाहिए। उन देशों और पार्टियों में जहां दूसरे और तीसरे इंटरनेशनल के बीच के संघर्ष का फैसला अभी नहीं हुआ है वहां मजदूर महिलाओं को उस पार्टी या ग्रुप को जो कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के साथ हैं के समर्थन में वे सभी चीजें करनी चाहिए जो वे कर सकती हैं चाहे स्थापित नेता जो कुछ भी कहते और करते हैं, उनको सभी ढुलमुल तत्वों और दूसरे पक्ष में चले गये तत्वों के खिलाफ निर्मम संघर्ष करना चाहिए। वर्ग सचेत सर्वहारा महिलाएं जो मुक्ति चाहती हैं, उन्हें कम्युनिस्ट इंटरनेशनल से बाहर खड़ी पार्टियों में नहीं रुकना चाहिए।

तीसरे इंटरनेशनल के विरूद्ध होने का अर्थ है नारी मुक्ति का दुश्मन होना।

पूरब और पश्चिम दोनों ही जगहों की वर्ग सचेत मेहनतकश महिलाओं को अपने देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों के सदस्य के बतौर कम्युनिस्ट इंटरनेशनल का समर्थन करना चाहिए। उनकी तरफ से कोई भी हिचकिचाहट या

जानी-मानी समझौतावादी पार्टियों और स्थापित नेताओं से अलग होने का डर, महान सर्वहारा संघर्ष, जो कि निर्मम और वैश्विक गृहयुद्ध के रूप में विकसित हो रहा है, को बहुत नुकसान पहुंचाएगा।

महिलाओं के बीच में काम के तरीके और रूप

अतः कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की तीसरी कांग्रेस ये मानती है कि सभी कम्युनिस्ट पार्टियों को महिला सर्वहारा के बीच निम्न आधार पर काम करना चाहिए:

1- महिलाओं को सभी जुझारू वर्ग संगठनों – पार्टी, ट्रेड-यूनियन, सहकारी संस्थाओं, फैक्ट्री, प्रतिनिधियों की सोवियतों इत्यादि में बराबर अधिकार और बराबर जिम्मेदारियों के साथ शामिल करना चाहिए।

2- सर्वहारा के सक्रिय संघर्ष (सर्वहारा की सैन्य प्रतिरक्षा समेत) के और सभी क्षेत्रों में नये समाज की बुनियाद के निर्माण में और उत्पादन और दिन-प्रतिदिन के जीवन को कम्युनिस्ट लाइन पर संगठित करने में महिलाओं का शामिल करने की महत्ता को स्वीकार करना चाहिए।

3- मातृत्व की जिम्मेदारी को सामाजिक जिम्मेदारी के बतौर माना जाना चाहिए और स्त्री की बच्चों की जननी के रूप में रक्षा और बचाव करने के लिए उपयुक्त कदम उठाये जाने चाहिये अथवा इनके लिये संघर्ष किया जाना चाहिए।

कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की तीसरी कांग्रेस पार्टियों और ट्रेड-यूनियनों में महिलाओं के किसी भी तरह के अलग संघों का या महिलाओं के विशेष संगठनों का दृढता से विरोध करती है, लेकिन स्वीकार करती है कि –

महिलाओं के बीच काम करने के विशेष तरीके होने चाहिए और कम्युनिस्ट पार्टी को इस काम के लिए विशेष उपकरण बनाना चहिए। यह अवस्थिति ग्रहण करने में कांग्रेस निम्न बातों को ध्यान में रखती है:

(क) वह उत्पीड़न जो कि स्त्री न सिर्फ बुर्जुआ पूंजीवादी देशों में, बल्कि सोवियत संरचना वाले देशों में भी, पूंजीवाद से कम्युनिज्म तक के संक्रमण के दौरान झेलती है;

(ख) महिलाओं की अत्यधिक निष्क्रियता और राजनीतिक पिछड़ापन जिसकी व्याख्या इस तथ्य से होती है कि सदियों से महिलाओं को सामाजिक जीवन से बाहर रखा गया है और परिवार में दासता की अवस्था में रखा गया है;

(ग) शिशु जन्म की विशेष भूमिका जो कि प्रकृति महिलाओं को प्रदान करती है और इस कार्य से संबंधित विशिष्टताएं इस बात की मांग करती है कि संपूर्ण समूह के हित में उनकी ऊर्जा और स्वास्थ्य का विशेष ध्यान रखा जाय;

कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की तीसरी कांग्रेस इसलिए यह मानती है कि महिलाओं के बीच काम करने के लिए विशेष उपकरण की जरूरत हैं। इस उपकरण का गठन हर स्तर पर सभी पार्टी कमेटियों, पार्टी केन्द्रीय समिति से लेकर

नीचे शहरी, जिला या स्थानीय पार्टी कमेटी तक, से संबद्ध आयोगों या विभागों के रूप में होगा जो कि महिलाओं के बीच काम को देखेंगे। यह कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की सभी पार्टियों के लिए बाध्यकारी है।

कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की तीसरी कांग्रेस इंगित करती है कि इन विभागों के द्वारा कम्युनिस्ट पार्टियां जो काम करेंगी उनमें निम्न शामिल हैं :

1- महिलाओं को कम्युनिस्ट विचारों में शिक्षित करना और उनको पार्टी कतारों में शामिल करना।

2- पुरूष सर्वहारा समुदाय के भीतर महिलाओं के प्रति पूर्वाग्रहों के खिलाफ लड़ना और पुरूष मजदूरों और महिला मजदूरों के दरमियान यह समझदारी बढ़ाना कि उनके हित साझे हैं।

3- सभी रूप और तरीके के गृहयुद्धों में मेहनतकश महिलाओं को शामिल कर, बुर्जुआ देशों की महिलाओं को पूंजीवादी शोषण के खिलाफ संघर्ष में, जीवनयापन के बढ़ते खर्चों के खिलाफ, आवास की कमी के खिलाफ, बेरोजगारी और दूसरी सामाजिक समस्याओं के इर्द-गिर्द जन कार्यवाही में भागीदारी के लिए प्रोत्साहित कर और सोवियत गणराज्यों में कम्युनिस्ट व्यक्तित्व और कम्युनिस्ट जीवन पद्धति के निर्माण में महिलाओं के भाग लेने के द्वारा उनकी इच्छाशक्ति को बढ़ाना।

4- महिलाओं की मुक्ति से संबंधित प्रश्नों को पार्टी की कार्यसूची और विधायिका के प्रस्तावों में प्रत्यक्षत: रखना। उनकी मुक्ति को सुनिश्चित करना, शिशु जननी के रूप में उनके हितों की रक्षा करना।

5- परंपरा, बुर्जुआ रिवाजों और धार्मिक विचारों की ताकत के खिलाफ सुनियोजित संघर्ष करना जिससे कि स्त्री और पुरूष के बीच स्वस्थ और अधिक सौहार्दपूर्ण संबंधों का रास्ता साफ हो, मेहनतकश अवाम की शारीरिक और नैतिक जीवनशक्ति सुनिश्चित हो।

पार्टी कमेटियों को सीधे महिलाओं के विभागों या आयोगों के सभी कामों का नेतृत्व करना चाहिए और उनके लिए जिम्मेदार होना चाहिए। विभाग या आयोग की प्रमुख को पार्टी कमेटी का सदस्य होना चाहिएं। जहां भी संभव हो विभागों या आयोगों के सदस्य कम्युनिस्ट होने चाहिए।

आयोग या विभाग को स्वतंत्र रूप से काम नहीं करना चाहिए। सोवियत देशों में उपयुक्त आर्थिक और राजनीतिक अंगों (सोवियत विभाग, आयोग, ट्रेड-यूनियनें) के माध्यम से उन्हें काम करना चाहिए; पूंजीवादी देशों में इनको उपयुक्त सर्वहारा संगठनों; पार्टी, यूनियनों, सोवियतों इत्यादि का सहयोग मिलना चाहिये।

जहां भी कम्युनिस्ट पार्टियों का अस्तित्व गैर कानूनी या अर्ध-कानूनी है वहां भी महिलाओं में काम करने के लिए उनको कोई उपकरण बनाना चाहिए। इस उपकरण को आम पार्टी उपकरण के मातहत होना चाहिये और इसे गैर कानूनी परिस्थिति के अनुकूल ढाला जाना चाहिये। सभी स्थानीय, क्षेत्रीय और केन्द्रीय गैर कानूनी संगठनों में, कानूनी संगठनों की तरह, महिलाओं के बीच प्रचार संगठित करने के लिए एक महिला कामरेड को जिम्मेदार बनाना चाहिए।

आधुनिक युग में ***ट्रेड-यूनियनों, उत्पादन यूनियनों एवं सहकारी समितियों*** को दोनों ही तरह के देशों में, जहां-जहां पूंजी की सत्ता पलटने के लिए संघर्ष अभी भी जारी है और जहां मजदूरों का सोवियत गणराज्य कायम है, महिलाओं के बीच पार्टी कार्य करने के लिए आधार बनाना चाहिए।

महिलाओं के बीच काम को पार्टी आंदोलन और संगठन की एकता की समझदारी से लैस होना चाहिए, लेकिन साथ ही स्वतंत्र पहलकदमी दिखानी चाहिए और दूसरे पार्टी आयोगों और अनुभागों से स्वतंत्र तौर पर आगे बढ़ते हुए महिलाओं की तीव्र और पूर्ण मुक्ति के लिए काम करना चाहिए। लक्ष्य, काम को दोहराना नहीं होना चाहिए बल्कि मजदूर महिलाओं को पार्टी और इसकी कार्यवाहियें में मदद करने में सक्षम बनाना होना चाहिए।

सोवियत देशों में महिलाओं के बीच पार्टी कार्य

सोवियत मजदूरों के गणराज्य में विभागों की भूमिका है कि वे महिलाओं को कम्युनिस्ट विचारों से शिक्षित करे, उनको कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल करें और उनकी स्व-सक्रियता और स्वतंत्रता विकसित करें, कम्युनिज्म के निर्माण में उनको शामिल करें और कम्युनिस्ट इंटरनेशनल का दृढ़ रक्षक बनने के लिए शिक्षित करें ।

विभागों को चाहिए कि वे सोवियत निर्माण के हर क्षेत्र में, रक्षा से लेकर गणराज्य की ढेर सारी व जटिल आर्थिक योजनाओं में महिलाओं को भाग लेने में मदद करें।

सोवियत गणराज्य में विभागों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि सोवियतों की आठवीं कांग्रेस के प्रस्ताव मजदूर और किसान महिलाओं को राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के निर्माण और संगठन में शामिल करने और उत्पादन को निर्देशित, प्रशासित, नियंत्रित और संगठित करने वाले, निकायों में उनकी भागीदारी के बारे में लिए गये, प्रस्ताव लागू होते हैं। अपने प्रतिनिधियों और अपने पार्टी निकायों के द्वारा विभागों को नये कानूनों को बनाने में भागीदारी करनी चाहिए और नारी मुक्ति के हित में जिन कानूनों को बदलने की जरूरत है उनके फिर से लिखे जाने को प्रभावित करना चाहिए। महिलाओं और कम उम्र के लोगों के श्रम की रक्षा करने के लिए कानून बनाने में विभागों को खास पहलकदमीं लेनी चाहिए।

सोवियत चुनाव अभियानों में विभागों को चाहिए कि मजदूर और किसान महिलाओं को अधिकतम संभव संख्या में शामिल करें और ध्यान रखें कि सोवियतों और इनकी कार्यकारिणी में मजदूर और किसान महिलाएं चुनी जायें।

पार्टी द्वारा संचालित सभी राजनीतिक और आर्थिक अभियानों की सफलता के लिये विभागों को काम करना चाहिये।

महिलाओं की तकनीकि शिक्षा को बेहतर बनाकर और मजदूर और किसान महिलाओं की उपयुक्त शैक्षिक संस्थाओं तक पहुंच सुनिश्चित कर विभागों को चाहिए कि महिलाओं के कुशलता को बढ़ावा दें।

विभागों का यह काम है कि वे देखें कि श्रम की सुरक्षा के लिए बने उद्यम आयोगों में मजदूर महिलाएं ली जाएं और मातृत्व और बचपन की सुरक्षा के लिए बने मदद आयोग और ज्यादा सक्रिय हों।

सामाजिक संस्थाओं : सामुदायिक भोजन कक्षों, लाउण्ड्रियों, मरम्मत की दुकानें, सामाजिक कल्याण की संस्थाएं, आवास कम्यून इत्यादि जो कि प्रतिदिन के जीवन को नयी कम्युनिस्ट लाइन पर रूपांतरित करते हैं और महिलाओं को संक्रमण काल के कठिनाइयों से मुक्त करते हैं, का पूरा जाल खड़ा करने में विभागों को मदद करनी चाहिए। ऐसी सामाजिक संस्थाएं, घर और परिवार के गुलाम को मजदूर वर्ग – वह वर्ग जो अपना मालिक स्वयं है और जो कि जीविका के नये रूपों का जन्मदाता है – का सदस्य बनाकर स्त्री के प्रतिदिन के जीवन को रूपान्तरित करती हैं।

विभागों को चाहिये कि वे ट्रेड-यूनियनों के भीतर कम्युनिस्ट फ्रैक्सन द्वारा गठित महिलाओं के बीच काम करने वाले संगठनों की मदद से महिला ट्रेड-यूनियन सदस्यों की कम्युनिस्ट विचारों में शिक्षा को प्रोत्साहित करे।

विभागों का सुनिश्चित करना चाहिए कि मजदूर महिलाएं आम फैक्टरी और आम फैक्टरी डेलीगेट बैठकों में जाएं।

विभागों को चाहिए कि सोवियत, आर्थिक और यूनियन कार्य में व्यवस्थित तरीके से डेलीगेट प्रेक्टिशनरों को नियुक्त करें।

(जब डेलीगेटों को गर्भावस्था के अंतिम महिनों में मजदूरी लेते हुए फैक्टरी के कामों से मुक्त कर दिया जाता था तो उन्हें "प्रैक्टिशनर" कहते थे। विचार यह था कि वे सोवियत संस्थाओं में काम करें और इस तरह सरकार चलाने का अनुभव प्राप्त करें।)

पार्टी के महिला विभागों को सर्वप्रथम मजदूर महिलाओं के साथ दृढ़ संबंध बनाने के लिए और गृहणियों, दफ्तर कर्मचारियों और गरीब किसान महिलाओं के साथ नजदीकी संपर्क बनाने के लिए काम करना चाहिए।

विभागों को मजदूर महिलाओं की डेलीगेट बैठकें बुलानी और संगठित करनी चाहिए ताकि पार्टी व जनता के बीच दृढ़ संबंध स्थापित हो, पार्टी के प्रभाव का विस्तार गैर पार्टी जनता तक हो और स्वतंत्र कार्यवाही और व्यवहारिक कार्यों में भागीदारी द्वारा आम महिलाओं को कम्युनिस्ट विचारों में शिक्षित किया जा सके।

डेलीगेट बैठकें मजदूर और किसान महिलाओं को शिक्षित करने का सबसे प्रभावशाली तरीका है; डेलीगेटों के माध्यम से पार्टी का प्रभाव मजदूर और किसान महिलाओं के गैर पार्टी हिस्से और पिछड़े हिस्से तक विस्तृत किया जा सकता है।

डेलीगेट बैठकों में संबंधित क्षेत्र, शहर या ग्रामीण इलाके (जहां किसान महिलाओं की बैठकों के जरिये ग्रामीण डेलीगेट चुनने का प्रश्न हो) की फैक्टरियों के प्रतिनिधि उपस्थित होने चाहिए या फिर उस मौहल्ले के प्रतिनिधि होने चाहिए जहां से गृहणी डेलीगेट चुनने का प्रश्न दरपेश हो। सोवियत रूस में डेलीगेट हर प्रकार के राजनीतिक और आर्थिक अभियान में भाग लेती हैं, विभिन्न प्रकार के उद्यम/ आयोगों में काम करने के लिए भेजी जाती हैं, सोवियत संस्थाओं के नियंत्रण में शामिल की जाती हैं और अंततः, सोवियतों के विभागों में दो महीने की अवधि के लिए प्रैक्टिशनर के तौर पर काम करती हैं। (1921 का कानून)

डेलीगेटों का चुनाव पार्टी द्वारा तय किये गये तरीके के अनुसार वर्कशाप बैठकों में या गृहणियों की बैठक में या दफ्तर कर्मियों की बैठक में होना चाहिये। विभागों को डेलीगेटों के बीच प्रचार और उद्वेलन के कार्य करने चाहिए, जिसके लिए कम से कम महीने में दो बैठकें होनी चाहिये। डेलीगेटों को अपने कार्य की रिपोर्ट अपनी 'शौप' या अपने आवासीय इलाके की बैठकों में देनी चाहिए। डेलीगेट तीन माह की अवधि के लिये चनी जाती हैं। मजदूर और किसान महिलाओं की व्यापक आधार वाली गैर पार्टी कांफ्रेंसें आम महिलाओं के बीच उद्वेलन का दूसरा तरीका है। इन कांफ्रेंसों में जो प्रतिनिधि हिस्सेदारी करती हैं उनका चुनाव उद्यमों की मजदूर महिलाओं और गांवों में किसान महिलाओं की बैठकों में होता है।

इन कांफ्रेंसों को बुलाने और संगठित करने में मजदूर महिलाओं के विभाग काम करते है।

विभाग या आयोग मौखिक और छपे हुए, सतत और विस्तृत प्रचार करते हैं ताकि पार्टी के व्यवहारिक कामों के दौरान मजदूर महिलाओं को जो अनुभव प्राप्त हुये हैं उनके आधाार पर आगे बढ़ा जा सके। विभाग, बैठकों और बहसों का आयोजन करते हैं, वे फैक्टरियों में मजदूर महिलाओं और बस्तियों में गृहणियों को संगठित करते हैं, डेलीगेटों की बैठकों का नेतृत्व करते हैं और घर-घर जाकर उद्वेलन संचालित करते हैं।

केन्द्रीय और जिला स्तर पर महिलाओं के बीच काम के लिये सेक्शनों की स्थापना करना चाहिए ताकि सोवियत स्कूलों में विशेष कैडरों का प्रशिक्षण हो और काम का विस्तार हो।

बुर्जुआ-पूंजीवादी देशों में

महिलाओं के बीच काम करने वाले आयोगों के वर्तमान कार्यभार वस्तुगत परिस्थिति द्वारा संचालित होते हैं। एक तरफ वैश्विक अर्थव्यवस्था का चरमराना, बेरोजगारी में बेतहाशा वृद्धि जिसका परिणाम यह है कि महिला मजदूरों की मांग में कम हुई है और वैश्यावृत्ति में वृद्धि हुई है; जीवन निर्वाह के खर्चे में वृद्धि; आवास संकट और नये साम्राज्यवादी युद्धों का खतरा; और दूसरी तरफ हर जगह मजदूरों द्वारा आर्थिक हड़तालों की श्रृंखला और वैश्विक पैमाने पर गृह युद्ध शुरू करने के प्रयास – यह सभी विश्व सामाजिक क्रांति की पूर्व पीठिका है।

मजदूर महिलाओं के आयोगों को सर्वहारा के महत्वपूर्ण कार्यभारों के बारे में सोचना चाहिए, संपूर्णता में पार्टी के नारों के लिए लड़ना चाहिए और बुर्जुआ और सामाजिक समझौतेबाजों के खिलाफ पार्टी की क्रांतिकारी कार्यवाही में महिलाओं को शामिल करना चाहिए।

आयोगों को सिर्फ यह सुनिश्चित नहीं करना चाहिए कि महिलाएं पार्टी, ट्रेड-यूनियनों और दूसरे वर्गीय संगठनों में शामिल हों और समान अधिकार और जिम्मेदारी रखें (उनको मजदूर महिलाओं का अलग-थलग करने के किसी भी प्रयास को नेस्तनाबूद करना चाहिए), बल्कि यह भी कि महिलाएं पार्टी, यूनियनों और सहकारी संस्थाओं के नेतृत्वकारी निकायों में पुरूषों के साथ बराबरी करते हुए भागीदारी करें।

आयोगों को महिला सर्वहारा और किसान महिलाओं के व्यापक स्तरों को संसद और सभी सामाजिक संस्थाओं के चुनावों में कम्युनिस्ट पार्टी के हित में अपने मताधिकार के प्रयोग के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए, साथ ही उन्हें यह भी समझाना चाहिए कि ये अधिकार सीमित हैं और पूंजीवादी शोषण को कमजोर करने और नारी मुक्ति को आगे बढ़ाने में कुछ खास नहीं कर सकते और यह कि सोवियत व्यवस्था संसदीय व्यवस्था से बेहतर है।

आयोगों को यह भी ध्यान देना चाहिए कि मजदूर महिलाएं, दफ्तर महिला कर्मचारी और किसान महिलाएं मजदूरों के प्रतिनिधियों की क्रांतिकारी आर्थिक और राजनीतिक सोवियतों के चुनावों में सक्रिय भागीदारी करें – उनको गृहणियों को राजनीतिक कार्यवाहियों में शामिल करना चाहिए और किसान महिलाओं को सोवियतों की अवधारणा के बारे में समझाना चाहिए। आयोगों को समान काम के लिए समान वेतन के सिद्धान्त को लागू करवाने के लिए विशेष तौर पर काम करना चाहिए। उनको मुफ्त और सार्वजनिक व्यावसायिक शिक्षा के अभियान में मजदूर महिलाओं और पुरूषों को खींचना चाहिए जिससे कि महिला मजदूरों की कुशलता में वृद्धि हो।

आयोगों को देखना चाहिए कि कम्युनिस्ट महिलाएं नगर निगम और दूसरी विधान सभाओं, जहां भी मताधिकार कानून उन्हें यह मौका दे, में भाग लें, ताकि पार्टी के क्रांतिकारी रणकौशल से उन्हें परिचित कराया जा सके। बुर्जुआ राज्य की विधायिका, नगर निगम और दूसरी संस्थाओं में भाग लेते हुए, कम्युनिस्ट महिलाओं को पार्टी के बुनियादी सिद्धान्तों और रणकौशल की रक्षा करनी चाहिए; उनको बुर्जुआ व्यवस्था के दायरे में सुधारों को व्यवहार में हासिल करने से ज्यादा मजदूर महिलाओं की तात्कालिक जरूरतों और प्रतिदिन के अनुभवों से पैदा हुए प्रश्नों और मांगों का इस्तेमाल सर्वहारा की तानाशाही के द्वारा इन मांगों को जीतने की लड़ाई में महिलाओं को शामिल करने के लिए, क्रांतिकारी नारे के रूप में, करने में, ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

आयोगों को संसदीय और स्थानीय सरकारी फ्रैक्शनों के साथ नजदीकी संपर्क में रहना चाहिए और स्त्री संबंधित सभी प्रश्नों पर उनसे सलाह-मशविरा करना चाहिए।

आयोगों को महिलाओं को समझाना चाहिए कि व्यक्तिगत घरेलू अर्थव्यवस्थाओं की व्यवस्था पिछड़ी और खर्चीली होती है, कि बच्चों को पालने के बुर्जुआ तौर-तरीके उत्तम तरीके नहीं हैं। मजदूर वर्ग के प्रतिदिन के जीवन को बेहतर बनाने के लिए पार्टी द्वारा पेश किये गये या समर्थित प्रस्तावों की तरफ उन्हें महिलाओं का ध्यान खींचना चाहिए।

कम्युनिस्ट पार्टी में ट्रेड-यूनियन महिलाओं को शामिल करने में आयोगों को मदद करनी चाहिए। पार्टी या उसके स्थानीय अनुभागों के नेतृत्व में इस काम को करने के लिए विशेष संगठनकर्ताओं की नियुक्ति की जानी चाहिए।

सहकारी संस्थाओं में मजदूर महिलाओं को कम्युनिस्ट विचारों के लिए लड़ने और इन संस्थाओं में, जिनकी क्रांति के दौरान और उसके बाद वितरण के केन्द्रों के रूप में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका होगी, में नेतृत्वकारी भूमिका निभाने के लिए मजदूर महिलाओं को तैयार करने के लिए महिलाओं के उद्वेलन आयोगों को प्रचारात्मक कार्यवाही करनी चाहिए।

आयोगों के सम्पूर्ण कार्य का लक्ष्य जनता की क्रांतिकारी गतिविधियों को विकसित करने का और इस प्रकार सामाजिक क्रांति को तेज करने का होना चाहिए।

आर्थिक तौर पर पिछड़े हुए देशों में (पूरब)

उन देशों में जहां उद्योग अल्पविकसित अवस्था में हैं कम्युनिस्ट पार्टी और मजदूर महिलाओं के आयोग को सुनिश्चित करना चाहिए कि पार्टी, यूनियनों और मेहनतकश वर्ग की दूसरी संस्थाओं में महिलाओं के समान अधिकार और जिम्मेदारियों को मान्यता मिलती हो।

विभागों या आयोगों को महिलाओं का उत्पीड़न करने वाले सभी पूर्वाग्रहों और सभी धार्मिक और धर्म निरपेक्ष रिवाजों के खिलाफ संघर्ष करना चाहिए। उन्हें यह उद्वेलन पुरुषों के मध्य भी करना चाहिये।

कम्युनिस्ट पार्टियों और उनके विभागों या आयोगों को महिलाओं की बराबरी के सिद्धान्त को बाल शिक्षा, पारिवारिक संबंध और लोकजीवन के क्षेत्रों तक बढ़ाना चाहिए।

विभागों को पूंजी द्वारा शोषित महिलाओं के स्तर मसलन कुटीर उद्योगों और चावल व कपास के बागानों में काम करने वाली महिलाओं का सर्वप्रथम समर्थन हासिल करने की कोशिश करनी चाहिए। सोवियत देशों में विभागों को दस्तकारों के वर्कशाप लगाने को प्रोत्साहित करना चाहिए। उन देशों में जहां बुर्जुआ व्यवस्था अभी भी अस्तित्व में है हमें बागानों में काम करने वाली महिलाओं को संगठित करने और पुरूषों के समान उन्हें यूनियनों में शामिल करने के काम को केन्द्रित करना चाहिए।

पूर्व के सोवियत देशों में पिछड़ेपन और सांस्कृतिक पूर्वाग्रहों को समाप्त करने का सर्वोत्तम तरीका जनता के आम सांस्कृतिक स्तर को ऊंचा उठाना है। विभागों को महिलाओं के लिए खुले वयस्क विद्यालयों के विकास को प्रोत्साहित करना चाहिए। बुर्जुआ देशों में आयोगों को विद्यालयों में बुर्जुआ प्रभाव के खिलाफ सीधा संघर्ष छेड़ देना चाहिए।

जहां भी संभव हो विभागों या आयोगों को घर-घर जाकर उद्वेलन करना चाहिए। विभागों को मजदूर महिलाओं के लिए क्लबों का आयोजन करना चाहिए और उनमें सबसे पिछड़ी महिलाओं को भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। क्लबों को सांस्कृतिक केन्द्र और प्रायोगिक मॉडल संस्था होना चाहिए जो कि दिखाये कि महिलाएं कैसे अपनी गतिविधियों के द्वारा मुक्ति की तरफ बढ़ सकती हैं (क्लबों से संबद्ध क्रेचों, नर्सरियों, साक्षरता स्कूलों इत्यादि की स्थापना द्वारा)।

बंजारों के बीच काम को संगठित करने के लिए सचल क्लबों की स्थापना करनी चाहिए।

सोवियत देशों में विभागों को चाहिए कि व्यवहारिक उदाहरणों के द्वारा वे मेहनतकश महिलाओं को विश्वास दिलायें कि घरेलू अर्थव्यवस्था और परिवार का पुराना रूप उनकी मुक्ति को रोकता है जबकि सामाजिक श्रम उनको आजाद करता है, और इस तरह इन विभागों को अर्थव्यवस्था के प्राक्-पूंजीवादी रूपों से उत्पादन के सामाजिक रूपों की तरफ संक्रमण में उपयुक्त सोवियत अंगों की मदद करनी चाहिए।

सोवियत रूस में विभागों को ध्यान देना चाहिए कि पूरब के लोगों के बीच पुरूषों के समान महिलाओं के अधिकार और हितों की रक्षा करने वाले कानूनों का पालन होता हो। विभागों को राष्ट्रीय न्यायालयों में जज या ज्यूरी के बतौर काम करने के लिए महिलाओं को प्रोत्साहित करना चाहिए।

सोवियतों और कार्यकारिणी में मजदूर और किसान महिलाओं के संघटन पर नजर रखते हुये सामाजिक विभागों को चाहिए कि सोवियत चुनावों में महिलाओं की भागीदारी बनाएं। पूरब की महिला सर्वहारा के बीच में काम वर्ग आधार पर किया जाना चाहिए। विभागों को दिखाना चाहिए कि नारी मुक्ति के प्रश्न का समाधान करने में नारीवादी लोग अक्षम हैं। पूरब के सोवियत देशों में बुद्धिजीवी समुदाय (जैसे कि शिक्षिकाएं) की महिलाएं, जो कि कम्युनिज्म से सहानुभूति रखती हों, को शिक्षण अभियानों में शामिल करना चाहिए। धार्मिक आस्था और राष्ट्रीय परंपराओं पर अनगढ़ और भौंडे हमलों से बचते हुए, पूरब की महिलाओं के बीच में काम कर रहे विभागों और आयोगों को राष्ट्रवाद और लोगों के दिमाग में जड़ जमाये धर्म की ताकत के खिलाफ लड़ना चाहिए।

पश्चिम के समान पूरब में भी, मेहनतकश महिलाओं के संगठन को राष्ट्रीय हितों की रक्षा के लिए नहीं बल्कि, अपने वर्ग के साझे हित में दोनों लिंगों के सर्वहारा की अंतर्राष्ट्रीय एकता के लिए तैयारी करनी चाहिए।

(चूंकि पूरब की महिलाओं के बीच काम इतना महत्वपूर्ण और साथ ही इतना नया है, इसलिए इन सिद्धान्तों के साथ विशेष निर्देश संलग्न हैं जो कि व्याख्या करते हैं कि किस तरह महिलाओं के बीच कम्युनिस्ट पार्टी के काम करने के बुनियादी तरीके को पूरब के प्रतिदिन के जीवन की विशिष्ट परिस्थितियों में लागू करना चाहिए।)

उद्वेलन और प्रचार के तरीके

पूरब और पश्चिम की कम्युनिस्ट पार्टियों को महिलाओं के बीच काम करने के इस बुनियादी सिद्धान्त को समझना चाहिए - 'कार्यवाही के द्वारा, उद्वेलन और प्रचार'। तभी वे अपने सबसे महत्वपूर्ण कार्यभार, सर्वहारा महिलाओं की कम्युनिस्ट शिक्षा-दीक्षा और कम्युनिज्म के योद्धाओं का प्रशिक्षण, पूरा करने में सक्षम होंगे।

कार्यवाही के द्वारा उद्वेलन का मतलब होता है मजदूर महिलाओं की अपनी कार्यवाही को प्रोत्साहित करना, अपनी क्षमताओं के प्रति उनके संदेहों का निवारण करना और निर्माण या संघर्ष के क्षेत्र में व्यवहारिक काम में उनको शामिल करना। इसका मतलब होता है अनुभव के द्वारा उन्हें यह जानने के लिए शिक्षित करना कि कम्युनिस्ट पार्टी को प्राप्त हर लाभ, पूंजी के शोषण के खिलाफ हर कार्यवाही महिलाओं की स्थिति को बेहतर बनाने के लिए होती है। पहले, व्यवहार और कार्यवाही है जो कि कम्युनिस्ट आदर्शों और सैद्धान्तिक अवस्थितियों को समझने में मदद करती है और उसके बाद सिद्धांत है जो कि व्यवहार और कार्यवाही को जन्म देते हैं–ये काम करने के वे तरीके हैं जिन्हें कम्युनिस्ट पार्टियों और उनके महिला विभागों को नारी जनसमुदाय तक पहुंचने के लिए अपनाने चाहिए।

विभागों को उद्यम और वर्कशापों के कम्युनिस्ट सेलों के निकट संपर्क में रहना चाहिए, यह सुनिश्चित करना चाहिए कि हर सेल में संबंधित फैक्टरी में महिलाओं के बीच काम करने के लिए एक संगठनकर्ता हो । इस तरह विभाग सिर्फ मौखिक प्रचार के बजाय कार्यवाही के केन्द्र बनेंगे।

विभाग और ट्रेड-यूनियनों को अपने प्रतिनिधियों और संगठनकर्ताओं के माध्यम से संपर्क में रहना चाहिए जो कि ट्रेड-यूनियन फ्रैक्शन के द्वारा नियुक्त होते हैं लेकिन विभाग के नेतृत्व में काम करते हैं ।

सोवियत देशों में कार्यवाही के द्वारा कम्युनिस्ट विचारों के प्रसार का मतलब है मजदूर महिलाओं, किसान महिलाओं, गृहणियों, और महिला दफ्तर कर्मियों को सोवियत निर्माण के हर क्षेत्र में, सेना और पुलिस से लेकर वे क्षेत्र जो सामुदायिक भोजन, सामाजिक शिक्षा की संस्थाओं के जाल, मातृत्व की सुरक्षा इत्यादि के संगठन द्वारा सीधे महिलाओं को मुक्त करते हैं, में शामिल करना। वर्तमान हालात में यह खास तौर पर जरूरी है कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के बहाली के काम में मजदूर महिलाओं को शामिल किया जाय।

पूंजीवादी देशों में व्यवहार के द्वारा प्रचार का अर्थ होता है सर्वप्रथम मजदूर महिलाओं को हड़ताल, प्रदर्शन और संघर्ष का कोई भी रूप जो कि क्रांतिकारी इच्छाशक्ति और चेतना को बढ़ाता है, में भागीदारी के लिए प्रोत्साहित करना। इसका मतलब यह भी है कि उनको सभी तरह के पार्टी कार्य में जिसमें गैर कानूनी कार्य शामिल हैं (खास तौर पर संपर्क कार्य) और पार्टी '***सुबोत्निक*** रविवार' का आयोजन जहां मजदूरों की पत्नियां और महिला दफ्तरकर्मी जो कि कम्युनिज्म से सहानुभूति रखती है स्वेच्छा से पार्टी के लिए काम करें और बच्चों के कपड़े सीने और मरम्मत इत्यादि के लिए आयोजित सत्र में शामिल करना।

महिलाओं को पार्टी के सभी राजनीतिक, आर्थिक और शैक्षणिक अभियानों में शामिल करना, कार्यवाही के द्वारा प्रचार, का एक पक्ष है।

पूंजीवादी देशो में विभागों को अपनी कार्यवाही और अपने प्रभाव का विस्तार सबसे पिछड़े और उत्पीड़ित महिला सर्वहारा तक करना चाहिए। सोवियत देशों में उनको प्रतिदिन के जीवन की परिस्थितियों और पूर्वाग्रहों की गुलाम बनी सर्वहारा और अर्ध-सर्वहारा महिला आबादी के बीच अपना काम करना चाहिए।

आयोगों को मजदूर महिलाओं और गृहिणियों और किसान महिलाओं और मानसिक श्रम करने वाली महिलाओं (बुद्धिजीवी महिलाएं) के बीच काम करना चाहिए। प्रचार और उद्वेलन से आयोग को आम बैठकें, एकल उद्यम की बैठकें और मजदूर महिलाओं और महिला दफ्तरकर्मियों (ट्रेड या जिले के अनुसार) की बैठकें बुलानी चाहिए। उनको आम महिला बैठकें, गृहिणियों की बैठकें इत्यादि भी बुलानी चाहिए।

पूंजीवादी देशों में आयोगों को सुनिश्चित करना चाहिए कि ट्रेड-यूनियनों, सहकारी संस्थाओं और फैक्टरी परिषदों में कम्युनिस्ट पार्टी के फ्रैक्शन महिला संगठनकर्ता को नियुक्त करें; अर्थात दूसरे शब्दों में, सत्ता पर कब्जा करने के लिए सर्वहारा की क्रांतिकारी गतिविधि को विकसित करने वाले सभी संगठनों में उनके प्रतिनिधि हों। सोवियत देशों में सभी सोवियत संस्थान जो कि सामाजिक जीवन का नेतृत्व, प्रशासन और नियंत्रण करते हैं और जो सर्वहारा तानाशाही का समर्थन करने व कम्युनिज्म की प्राप्ति में योगदान करते हैं, में वे मजदूर और किसान महिलाओं की नियुक्ति करें।

आयोग को उन फैक्टरियों या दफ्तरों में जहां बड़ी संख्या में महिलाएं काम करती हैं, में सर्वहारा महिला कम्युनिस्टों की नियुक्ति करनी चाहिए; जैसे कि सोवियत रूस में सफल कोशिशें की जा चुकी हैं, उन्हें कम्युनिस्ट मजदूर महिलाओं को बड़ी सर्वहारा बस्तियों और औद्योगिक केन्द्रों में भेजना चाहिए।

महिलाओं के बीच काम करने वाले आयोग को मजदूर और किसान महिलाओं की डेलीगेट बैठकों और गैर-पार्टी कांफ्रेंसों को आयोजित करने के लिए रूसी कम्युनिस्ट पार्टी के महिला विभाग के अत्यधिक सफल अनुभवों को इस्तेमाल करना चाहिए। विभिन्न सैक्टरों के महिला मजदूरों और महिला दफ्तरकर्मियों, और किसान महिलाओं और गृहिणियों की बैठकें आयोजित करनी चाहिए, जहां ठोस मांगों और जरूरतों पर विचार-विमर्श हो और आयोग चुने

जायें। इन आयोगों को उन लोगों के साथ नजदीकी सम्बन्ध रखना चाहिए जिन्होंने उन्हें चुना है और महिलाओं के बीच काम के लिए गठित आयोगों से भी ऐसा ही सम्बन्ध रखना चाहिये। आयोगों को अपने उद्वेलक, कम्युनिज्म के प्रति द्वेष रखने वाली पार्टियों की बैठकों की बहसों में शामिल होने के लिए भेजना चाहिए। बैठकों और बहसों के द्वारा प्रचार और उद्वेलन को घर-घर जाकर सुनियोजित उद्वेलन के द्वारा अनुपूरित करना चाहिए। यह काम करने वाली हर कम्युनिस्ट महिला के पास अधिक से अधिक दस घरों की जिम्मेदारी होनी चाहिए; गृहिणियों के बीच उद्वेलन करने के लिए उन्हें कम से कम सप्ताह में एक चक्कर लगाना चाहिए, और जब कम्युनिस्ट पार्टी कोई अभियान चला रही हो या किसी कार्यवाही की तैयारी कर रही हो तो और जल्दी-जल्दी जाना चाहिए।

आयोगों को निर्देश दिया जाता है कि अपने उद्वेलन, सांगठनिक और शैक्षणिक कार्यों में लिखित शब्दों को इस्तेमाल करें :

1- ताकि हर देश में महिलाओं के बीच काम करने के बारे में एक केन्द्रीय पत्र प्रकाशित करने में मदद मिले।

2- ताकि पार्टी प्रेस में 'मजदूर महिलाओं का पन्ना' विशेषांकों का प्रकाशन हो सके और सामान्य पार्टी और ट्रेड-यूनियन प्रेस में महिलाओं के बीच काम करने के प्रश्न पर लेखों को शामिल किया जाना सुनिश्चित किया जा सके; उपरलिखित प्रकाशनों में संपादकों की नियुक्ति और प्रेस में काम करने के लिए पार्टी और गैर-पार्टी सदस्य दोनों तरह की मजदूर महिलाओं के प्रशिक्षण के लिए आयोग जिम्मेदार है।

पर्चों और पैंफलेटों के रूप में लोकप्रिय उद्वेलक और शैक्षणिक साहित्य का प्रकाशन आयोग को करवाना चाहिए और उसके वितरण में मदद करनी चाहिए।

आयोग को पार्टी की सभी राजनीतिक और शैक्षणिक संस्थाओं का प्रभावकारी तरीके से इस्तेमाल करने में कम्युनिस्ट महिलाओं की मदद करनी चाहिए।

आयोग को युवा कम्युनिस्ट महिलाओं को सामान्य पार्टी कोर्सों और सांध्य गोष्ठियों में शामिल करना चाहिये तथा उनकी वर्ग चेतना और उनके जुझारूपन को बढ़ाने के लिए काम करना चाहिए। मेहनतकश महिलाओं के लिए विशेष संध्याकालीन पाठन एवं विमर्श सत्रों एवं वार्ता श्रृंखलाओं का तभी आयोजन किया जाना चाहिए जब इनकी वाकई जरूरत हो और इन्हें टाला न जा सके।

मजदूर महिलाओं और मजदूर पुरूषों के बीच कामरेडाना संबंध को मजबूत करने के लिए न केवल यह जरूरी है कि कम्युनिस्ट महिलाओं के लिए विशेष कोर्स और स्कूल का आयोजन नहीं किया जाये, बल्कि सभी सामान्य पार्टी स्कूलों को बिना चूके महिलाओं के बीच काम करने के तरीके के बारे में कोर्स शामिल करने चाहिए। विभागों के पास यह अधिकार होना चाहिए कि वे अपने द्वारा खास तय संख्या में प्रतिनिधियों को सामान्य पार्टी कोर्स में भेज सकें।

विभागों की संरचना

महिलाओं के बीच काम करने के लिए विभाग और आयोग स्थानीय और क्षेत्रीय और केन्द्रीय समिति स्तर पर सभी पार्टी कमेटियों से संबद्ध होते हैं। इनका आकार पार्टी द्वारा तय किया जाता है और खास देश की जरूरत पर निर्भर करता है। इन आयोगों में वेतनभोगी कार्यकताओं की संख्या भी अपने वित्तीय संसाधनों के अनुसार पार्टी के द्वारा तय की जायेगी।

महिलाओं के उद्वेलन विभाग की निर्देशिका या आयोग की अध्यक्षता करने वाली स्थानीय पार्टी कमेटी की सदस्य होनी चाहिए। जहां पर ऐसा नहीं है वहां विभाग की निर्देशिका को कमेटी के सभी सत्रों में महिला विभाग के प्रश्नों पर पूर्ण अधिकार के साथ और दूसरे प्रश्नों पर बात रखने के अधिकार के साथ उपस्थित होना चाहिए।

ऊपर बताये गये सामान्य कार्य के साथ-साथ, जिला या काउंटी विभाग या आयोग के पास निम्न अतिरिक्त कार्य हैं: संबंधित जिले के विभागों और केन्द्रीय विभाग के बीच संपर्क को प्रोत्साहित करना; संबंधित जिला/क्षेत्र के विभागों या आयोगों की कार्यवाहियों के बारे में सूचना एकत्र करना; यह सुनिश्चित करना कि स्थानीय विभागों को सामग्री के आदान-प्रदान का मौका मिले; जिला/काउंटी को साहित्य उपलब्ध कराना; उद्वेलकों को जिलों में भेजना; पार्टी सदस्यों को महिलाओं के बीच काम करने के लिए गोलबंद करना; जिला/काउंटी की कांफ्रेंस साल में कम से कम दो बार आहूत करना जिसमें हर विभाग का प्रतिनिधित्व एक या दो कम्युनिस्ट महिला करें; और संबंधित जिला/काउंटी की मजदूर और किसान महिलाओं की गैर पार्टी कांफ्रेंसें बुलाना।

कालेजियम के सदस्य का नामांकन विभाग या आयोग के प्रमुख द्वारा और काउंटी या जिला कमेटी के अनुमोदन द्वारा होता है। निर्देशिका का चुनाव जिला या काउंटी कमेटी के अन्य सदस्यों की ही तरह जिला या काउंटी पार्टी कांफ्रेंस में होता है।

जिला/काउंटी और स्थानीय विभागों या आयोगों के सदस्यों का चुनाव शहर, जिला या काउंटी में पार्टी कांफ्रेंसों में या उनकी नियुक्ति पार्टी कमेटियों के संपर्क से उपयुक्त विभागों द्वारा की जाती है।

अगर महिला विभाग की निर्देशिका जिला पार्टी कमेटी/काउंटी पार्टी कमेटी की सदस्य नहीं है, उसके पास अधिकार होगा कि पार्टी कमेटी के सभी सत्रों में विभाग से संबंधित प्रश्नों के ऊपर पूर्ण मताधिकार के साथ और अन्य सभी प्रश्नों पर बात रखने के अधिकार के साथ उपस्थित रहे।

केन्द्रीय पार्टी विभाग, जिला/काउंटी विभाग के लिए सूचीबद्ध कार्यों के अतिरिक्त पार्टी के कार्य के बारे में महिलाओं के उद्वेलन विभाग को निर्देश देता है, विभागों के कार्यों की निगरानी करता है, उपयुक्त पार्टी निकायों से संपर्क में महिलाओं के बीच कार्य करने के लिए व्यक्तियों का आवंटन करता है, महिलाओं की कानूनी और आर्थिक दशाओं में हुए परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए नारी श्रम की परिस्थिति और प्रगति की जांच करता है, अपने

प्रतिनिधियों या अधिकृत व्यक्तियों के माध्यम से मजदूर वर्ग के जीवन को बेहतर बनाने या बदलने वाले श्रम और बचपन की सुरक्षा इत्यादि प्रश्नों पर काम करने वाले विशेष आयोगों में भागीदारी करता है,'केन्द्रीय महिलाओं का पन्ना' का प्रकाशन करता है, मेहनतकश महिलाएं के लिए निर्धारित पत्रिका का संपादन करता है, सभी जिला/काउंटी विभागों के प्रतिनिधियों की साल में कम से कम एक बैठक बुलाता है, महिलाओं के बीच काम करने वालों के निर्देशकों के लिए राष्ट्रीय यात्रा का आयोजन करता है, यह सुनिश्चित करता है कि मेहनतकश महिलाओं और सभी विभाग पार्टी के सभी राजनीतिक और आर्थिक अभियानों और कार्यवाहियों में हिस्सेदारी करें, कम्युनिस्ट महिलाओं के अंतर्राष्ट्रीय सचिवालय को एक प्रतिनिधि भेजता है और अंतर्राष्ट्रीय मजदूर महिला दिवस का आयोजन करता है।

अगर महिलाओं के विभाग की निर्देशिका केन्द्रीय समिति की सदस्य नहीं है तो उसे केन्द्रीय समिति के सभी सत्रों में विभाग से संबंधित प्रश्नों पर पूर्ण मताधिकार के साथ और अन्य सभी प्रश्नों पर बात रखने के अधिकार के साथ उपस्थित होने का अधिकार है। महिला विभाग की निर्देशिका या आयोग की अध्यक्ष की नियुक्ति पार्टी की केन्द्रीय समिति द्वारा होती है या उसका चुनाव अखिल पार्टी कांग्रेस में होता है। सभी विभागों या आयोगों द्वारा पारित फैसलों या प्रस्तावों को अंततः पार्टी कमेटियों द्वारा अनुमोदित होना होगा। केन्द्रीय विभाग का आकार और पूर्ण मताधिकार वाले सदस्यों की संख्या पार्टी की केन्द्रीय समिति द्वारा तय की जाती है।

अंतर्राष्ट्रीय कार्य के बारे में

कम्युनिस्ट इंटरनेशनल का अंतर्राष्ट्रीय महिला सचिवालय, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कम्युनिस्ट पार्टियों के महिलाओं के काम का नेतृत्व करता है, कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के द्वारा पेश किये गये लक्ष्यों के लिए मजदूर महिलाओं के संघर्ष को एकताबद्ध करता है, और सभी देशों और सभी कौमों की महिलाओं को सोवियतों की सत्ता और मजदूर वर्ग की तानाशाही के लिए क्रांतिकारी संघर्ष में शामिल करता है। **(Source: Third Congress of the Communist International, 'Method's and Forms of Work among Communist Party Women: Theses,' Theses Resolutions and Manifestos of the First Four Congress of the Third International translated by Alix Holt and Barbara Holland.Ink links1980, इंटरनेट,हिन्दी में अनुवाद हमारा, जोर मूल में)**